

[2023] 6 एस. सी. आर 1

जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर

& ओआरएस।

वी.

राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण

(2023 की आपराधिक अपील संख्या 1011)

1 मई, 2023

[डॉ. धनंजय वाई. चंद्रचूड, सीजेआई और

जे. बी. पारदीवाला, जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

एसएस। 167 (2) , 173 - पूर्वनिर्धारित जमानत-यू/एस की पात्रता। 167 (2) - हालांकि आरोप पत्र वैधानिक प्रावधानों के तहत दायर किया गया होगा।

कानून में निर्धारित समय अवधि के बावजूद आरोप पत्र एक सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित मंजूरी के वैध आदेश के बिना था-आयोजित: यह नहीं कहा जा सकता है कि मंजूरी के बिना दायर किया गया आरोप पत्र एक अपूर्ण आरोप पत्र जिसे एस के अनुरूप नहीं कहा जा सकता है। 173 - मंजूरी के अनुसार मंजूरी देने वाले प्राधिकरण का कर्तव्य है जो जांच से बिल्कुल भी जुड़ा नहीं है-यदि मंजूरी देने वाले प्राधिकरण को मंजूरी देने में कुछ समय लगता है, तो यह जांच एजेंसी द्वारा दायर अंतिम रिपोर्ट को दूषित नहीं करता है।

न्यायालय-ओं के समक्ष। 173 मंजूरी आदेश के बारे में बिल्कुल नहीं बोलता है। 167 केवल जाँच के बारे में भी बात करता है और मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान के बारे में नहीं-आरोप पत्र दाखिल करना एस के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है। 167 और यह कि कोई अभियुक्त वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत पर रिहा होने के किसी भी अक्षम्य अधिकार का दावा नहीं कर सकता है। 167 (2) इस आधार पर कि आरोप पत्र दायर करने के लिए वैधानिक समय अवधि की समाप्ति से पहले संज्ञान नहीं लिया गया है

मंजूरी देने पर कहीं भी विचार नहीं किया गया है। 167 .

पूर्वनिर्धारित जमानत-यू/एस की पात्रता। 167 (2) जब जांच एजेंसी की ओर से अपराध के लिए आरोप पत्र दायर करने में त्रुटि हुई हो

मजिस्ट्रेट के न्यायालय में गणना की गई, न कि सत्र या नामित न्यायालय में-आयोजित: मजिस्ट्रेट के न्यायालय के समक्ष पहले आरोप पत्र दाखिल करने में जांच एजेंसी की ओर से त्रुटि

इसका अभियुक्त के वैधानिक/पूर्वनिर्धारित जमानत लेने के अधिकार से कोई लेना-देना नहीं है। 167 (2) - जब एन. आई. ए. द्वारा यू. ए. पी. ए. के तहत अभियोजन की बात आती है तो प्रतिबद्ध कार्यवाही की आवश्यकता नहीं होती है।

एस. 16 एन. आई. ए. अधिनियम का-ऐसा इसलिए है क्योंकि विशेष न्यायालय इस प्रकार कार्य करता है

-

[2023] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

मूल क्षेत्राधिकारों में से एक-एस के आधार पर। 16 एन. आई. ए. अधिनियम के अनुसार, न्यायालय को धारा 193 सी. आर. पी. सी. की आवश्यकताओं का पालन करने की आवश्यकता नहीं है-तथ्यों पर, डिफ़ॉल्ट जमानत की मांग करने वाला आवेदन यू / s.167 (2) r/w। 43 यू. ए. पी. ए. का डी विशेष न्यायाधीश, एन. आई. ए. के समक्ष 14.12.2020 पर दायर किया गया था।

और उस समय तक, आरोप पत्र पहले ही दायर किया जा चुका था और कार्यवाही विशेष न्यायाधीश, सी. बी. आई.-राष्ट्रीय जांच एजेंसी अधिनियम, 2008 की अदालत में लंबित थी। धारा 16-गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम, 1967।

धारा 167-जाँच-पड़ताल करने वाली एजेंसियाँ

जाँच पूरा करने के लिए समय का विस्तार-एन. आई. ए. के साथ-साथ राज्य की जाँच एजेंसी को समय बढ़ाने की सलाह देना, इस बात का ध्यान रखना कि इस तरह के विस्तार के लिए अंतिम समय में अनुरोध नहीं किया जाता है, यदि अभियुक्त ने जमानत आवेदन के लंबित होने या बाद में आरोप पत्र दायर करने या अदालत के समक्ष अभियोजन पक्ष द्वारा समय बढ़ाने की मांग करने वाली रिपोर्ट के बावजूद, डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने का अधिकार लागू रहता है-हालाँकि, जहाँ अभियुक्त डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए आवेदन करने में विफल रहता है जब अधिकार उसे प्राप्त होता है, और बाद में एक आरोप पत्र, या समय बढ़ाने की मांग करने वाली रिपोर्ट को प्राथमिकता दी जाती है, तो डिफ़ॉल्ट जमानत का अधिकार समाप्त हो जाएगा-अदालत मामले का संज्ञान लेने या जांच पूरी करने के लिए और समय देने के लिए स्वतंत्र होगी, हालाँकि अभियुक्त कर सकता है।

याचिकाओं को खारिज करते हुए अदालत ने

पकड़ना: 1.1 यह नहीं कहा जा सकता है कि मंजूरी के बिना दायर किया गया आरोप पत्र एक अधूरा आरोप पत्र है जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (5) के अनुरूप नहीं कहा जा सकता है। कानून के तहत मंजूरी की आवश्यकता है या नहीं, यह एक ऐसा सवाल है जिस पर अपराध का संज्ञान लेते समय विचार किया जाना चाहिए, न कि जांच या जांच के दौरान। जाँच और अभियोजन के चरण में एक स्पष्ट अंतर है। अभियोजन तब शुरू होता है जब अपराध का संज्ञान लिया जाता है। यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अपराध का संज्ञान लिया जाता है न कि अपराधी का। यह नहीं कहा जा सकता है कि सक्षम अधिकारियों से मंजूरी प्राप्त करना या

संबंधित अधिकारी जाँच का हिस्सा हैं। मंजूरी की आवश्यकता केवल अदालत को अपराध का संज्ञान लेने में सक्षम बनाने के लिए है। अदालत मंजूरी आदेश जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर बनाम के बाद अपराध का संज्ञान ले सकती है।

राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण

अदालत के समक्ष पेश किया गया था, लेकिन जिस क्षण, अंतिम रिपोर्ट उन दस्तावेजों के साथ दायर की जाती है जिन पर अभियोजन पक्ष द्वारा भरोसा किया जा सकता है, तब जांच पूरी हो गई मानी जाएगी। संज्ञान लेना पूरी तरह से अलग है

जाँच को पूरा करना। जाँच को पूरा करना और अंतिम रिपोर्ट दाखिल करना जाँच एजेंसी का कर्तव्य है, लेकिन अपराध का संज्ञान लेना अदालत की शक्ति है। न्यायालय, किसी मामले में, अपराध का संज्ञान नहीं ले सकता है

अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के बाद भी विशेष अवधि। ऐसी परिस्थिति में, संबंधित अभियुक्त डिफॉल्ट जमानत पर रिहा होने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत अपने अधिम्य अधिकार का दावा नहीं कर सकते हैं। सी. आर. पी. सी. की धारा 167 (2) के तहत जो विचार किया गया है, वह यह है कि मजिस्ट्रेट या नामित न्यायालय (जैसा भी मामला हो) के पास 180 दिनों या 90 दिनों या 60 दिनों की अवधि से आगे आरोपी को हिरासत में रखने का आदेश देने की कोई शक्ति नहीं है। यदि जांच निर्धारित अवधि के भीतर पूरी हो जाती है, तो संबंधित अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधान के तहत जमानत पर रिहा होने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है। [पैरा 43] [32-सी; डी-एच]

1.2 . एक बार उन सभी दस्तावेजों के साथ एक अंतिम रिपोर्ट दायर कर ली गई है जिन पर अभियोजन पक्ष भरोसा करने का प्रस्ताव करता है, तो जांच

मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को मंजूरी देने के लिए अपने दिमाग को लागू करने में सक्षम बनाने का अधिकार। मंजूरी के अनुसार मंजूरी देने वाले प्राधिकरण का कर्तव्य है जो जांच से बिल्कुल भी जुड़ा नहीं है। यदि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को मंजूरी देने में कुछ समय लगता है, तो यह जांचकर्ता द्वारा दायर अंतिम रिपोर्ट को दूषित नहीं करता है। न्यायालय के समक्ष एजेंसी। धारा 173 सी. आर. पी. सी. मंजूरी आदेश के बारे में बिल्कुल नहीं बताती है। सी. आर. पी. सी. की धारा 167 भी केवल जांच के बारे में बात करती है न कि उसके द्वारा संज्ञान के बारे में।

मजिस्ट्रेट। इसलिए, एक बार अंतिम रिपोर्ट दाखिल हो जाने के बाद, यह जांच पूरी होने का प्रमाण है और यदि अंतिम रिपोर्ट संबंधित आरोपी की रिमांड की प्रारंभिक तिथि से 180 दिनों या 90 दिनों या 60 दिनों की अवधि के भीतर दायर की जाती है, तो वह यह दावा नहीं कर सकता है कि मंजूरी आदेश दाखिल करने के अभाव में उसे जमानत पर रिहा होने का अधिकार प्राप्त हो गया है। [पैरा 44] [33-ए-डी] [2023] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

1.3 यह स्पष्ट है कि द्वारा पारित मंजूरी का आदेश

अभियुक्त के लिए यह तर्क देना खुला है कि त्वरित सुनवाई के उसके अधिकार का उल्लंघन किया जा सकता है जिससे संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होता है। यह अभियुक्त को मुकदमे में देरी के आधार पर नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करने का अधिकार दे सकता है। लेकिन यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधानों के तहत वैधानिक/चूक जमानत के लिए प्रार्थना करने का आधार नहीं हो सकता है। [पैरा 47] [34-सी-ई] 1.4 180 दिनों की अधिकतम अवधि जो जांच एजेंसी को जांच पूरी करने के लिए दी जा रही है

जिस मामले में यू. ए. पी. ए. के तहत अपराध के लिए अभियोजन एक पैकेज के रूप में कुछ नहीं है जिसे 180 दिनों की इस अवधि के भीतर मंजूरी प्राप्त करने सहित सब कुछ पूरा करना होगा। जाँच एजेंसी का मंजूरी से कोई लेना-देना नहीं है। मंजूरी पूरी तरह से एक अलग प्रक्रिया है। जाँच एजेंसी द्वारा एकत्र की गई सामग्री के आधार पर मंजूरी दी जाती है जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत अंतिम रिपोर्ट का हिस्सा है। जाँच एजेंसी को जाँच पूरी करने के लिए पूरे 180 दिन का समय मिलता है। यह कहना कि मंजूरी प्राप्त करना और उसे आरोप पत्र के साथ 180 दिनों की अवधि के भीतर रखा जाना चाहिए, कुछ ऐसा है जो न केवल चर्चा किए गए कानून के प्रावधानों के विपरीत है, बल्कि अकल्पनीय है। [पैरा 49] [35 डी-एफ]

1.5 यह बहुत आवश्यक है कि जांच एजेंसी द्वारा आरोप पत्र के रूप में एकत्र किए गए साक्ष्य

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के अनुसार। निवेदन कि जाँच एजेंसी को अवधि को समायोजित करना पड़ सकता है जांच इस तरह से की जाए कि 180 दिनों की अवधि के भीतर मंजूरी भी प्राप्त की जाए और अदालत के समक्ष रखी जाए।

बिल्कुल असहनीय।

[पैरा 53] [37-ई-जी] जजबीर सिंह @जैसबिर सिंह सामरा @जैसबिर बनाम। राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण

संज्ञान लिया गया है या नहीं, यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के अनुपालन के उद्देश्य से प्रासंगिक नहीं है। केवल यह आरोप पत्र दाखिल करना पर्याप्त है। [पैरा 57] [41-जी]

1.7 आरोप पत्र दाखिल करना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है और यह कि कोई आरोपी दावा नहीं कर सकता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने का कोई भी अक्षम्य अधिकार इस आधार पर कि वैधानिक समय अवधि की समाप्ति से पहले संज्ञान नहीं लिया गया है

आरोप पत्र दाखिल करें। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के तहत मंजूरी देने पर विचार नहीं किया गया है। [पैरा 63] [47-डी-ई]

रितु छाबरिया बनाम। भारत संघ और अन्य, लिखें

याचिका (सीआरएल) 2023 का सं. 60-विशिष्ट।

सुरेश कुमार भीकमचंद जैन बनाम। की स्थिति महाराष्ट्र और दूसरा (2013) 3 एस. सी. सी. 77: [2013] 1 एससीआर 1037; के. वीरास्वामी बनाम। भारत संघ और अन्य (1991) 3 एस. सी. सी. 655: [1991] 3 एस. सी. आर. 189-निर्भर।

दिनेश डालमिया बनाम। सी. बी. आई. (2007) 8 एस. सी. सी. 770 [2007] 9 एस. सी. आर. 1124; केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम। अशोक कुमार अग्रवाल (2014) 14 एससीसी 295: [2013] 14 एससीआर 983; मोहम्मद इकबाल मदार शेख और अन्य बनाम। महाराष्ट्र राज्य (1996) 1 एससीसी 722: [1996] 1 एस. सी. आर. 183; एम. रवींद्रन बनाम खुफिया अधिकारी, राजस्व खुफिया निदेशालय (2021) 2 एस. सी. सी. 485 निर्दिष्ट को।

2.1 दोनों अधिनियमों-एन. आई. ए. और यू. ए. पी. ए. अधिनियम की योजना से यह स्पष्ट होता है कि एक बार जांच पूरी हो जाने के बाद, निम्नलिखित रिपोर्ट दी जाती है -

ऐसे तथ्यों की शिकायत प्राप्त होने पर, जो इस तरह के अपराध का गठन करते हैं, अभियुक्त के मुकदमे के लिए किए जाने के बिना कोई अपराध या ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर। इस प्रकार, एन. आई. ए. अधिनियम में धारा 16 को शामिल करके विधायिका ने विशेष [2023] 6 एस. सी. आर. बनाया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

सत्र न्यायालय के विपरीत मूल अधिकार क्षेत्र के न्यायालय के रूप में न्यायालय, जो दंड प्रक्रिया संहिता के तहत एक न्यायिक न्यायालय है। [पैरा 68] [49-बी-सी]

2.2 . आरोप पत्र एस. डी. जे. एम. की अदालत में दायर नहीं किया जा सकता था और इसे विशेष अदालत में दायर किया जाना चाहिए था। अदालत एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 विशेष न्यायालय को अभियुक्त के बिना किसी भी अपराध का संज्ञान लेने का अधिकार देती है।

पंजाब, एसएस नगर, मोहाली। यह विवाद में नहीं है कि उस समय जब विशेष न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लिया था यू. ए. पी. ए. और 1908 के अधिनियम के तहत प्रतिबंध पहले ही दिए जा चुके थे। [पैरा 72] [51-डी-ई; एफ-एच]

2.3 मजिस्ट्रेट की अदालत के समक्ष पहले आरोप पत्र दायर करने में जांच एजेंसी की ओर से हुई त्रुटि का आरोपी के दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत लेने के अधिकार से कोई लेना-देना नहीं है। समादेश कार्यवाही नहीं है

जब एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 के आधार पर एन. आई. ए. द्वारा यू. ए. पी. ए. के तहत अभियोजन की बात आती है तो यह आवश्यक है। ऐसा इसलिए है क्योंकि विशेष न्यायालय मूल क्षेत्राधिकारों में से एक के रूप में कार्य करता है। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 के आधार पर, न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 की आवश्यकताओं का पालन करने की आवश्यकता नहीं है। [पैरा 73] [52-ए-बी]

अब्दुल अज़ीज़ पी. वी. और अन्य बनाम। राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण (2014) 16 एस. सी. सी. 543; फखरी आलम बनाम। की स्थिति

उत्तर प्रदेश 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन 532; चित्रा

रामकृष्ण बनाम। केंद्रीय जांच ब्यूरो (2022)

एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 3124; रामभाई नाथभाई गडवी और अन्य वी। गुजरात राज्य (1997) 7 एससीसी 744: [1997] 3 पूरक। एस. सी. आर. 356; अशरफखान बनाम। गुजरात राज्य (2012) 11 एससीसी 606:

[2012] 12 एस. सी. आर. 1033; जजबीर सिंह @जैसबिर सिंह समरा @जैसबिर बनाम। राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण

बिक्रमजीत सिंह बनाम। पंजाब राज्य (2020) 10 एससीसी 616; संजय दत्त बनाम राज्य (1994) 5 एससीसी 410: [1994] 3 पूरका एस. सी. आर. 263; गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय बनाम। राहुल

मोदी और अन्य (2022) एस. सी. सी. ऑनलाइन 153; उदय

मोहनलाल आचार्य बनाम। महाराष्ट्र राज्य (2001) 5 एससीसी 453: [2001] 2 एससीआर 878; राकेश कुमार पॉल बनाम। असम राज्य (2017) 15 एससीसी 67: [2017] 8 एससीआर 785;

अचपाल उपनाम रामस्वरूप और एक अन्य बनाम। की स्थिति

राजस्थान (2019) 14 एस. सी. सी. 599: [2018] 12 एस. सी. आर. 327; केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम। आर. एस. पाई और एक अन्य (2002) 5 एस. सी. सी. 82: [2002] 2 एस. सी. आर. 889; नारायण राव बनाम ए. पी. ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 737: [1958] एससीआर 283:

1957 क्री एलजे 1320; सत्य नारायण मुसादी और अन्य बनाम। बिहार राज्य (1980) 3 एस. सी. सी. 152; सतीश कुमार बनाम पंजाब राज्य और एक अन्य 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. एंड एच. 786 -

संदर्भित किया गया।

3.1 सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट एस. डी. जे. एम. की अदालत में 15.11.2019 पर दायर की गई थी, जो 161 वां दिन था।

दो अपीलार्थियों की गिरफ्तारी की तारीख से। उन्हें सबसे पहले 08.06.2019 पर गिरफ्तार किया गया था। पंजाब पुलिस ने अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर की अदालत में आवेदन किया

04.09.2019 पर यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी (2) (बी) के प्रावधान को लागू करते हुए जांच को पूरा करने के लिए समय का विस्तार। जब समय बढ़ाने के लिए यह आवेदन दायर किया गया था, तो 90 दिनों की अवधि समाप्त होने के लिए केवल दो दिन बचे थे। यह इस तथ्य का संकेत है कि 91 वां दिन 07.09.2019 पर पड़ा होगा। इस बात पर प्रकाश डालना महत्वपूर्ण है कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर ने पंजाब पुलिस द्वारा दायर 'आईडी2' दिनांकित विस्तार आवेदन पर गौर किया और अंततः अपने 'आईडी1' दिनांकित आदेश के माध्यम से समय सीमा को 101 वें दिन बढ़ा दिया। जब तक अमृतसर के अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने समय बढ़ाने का आदेश पारित किया, तब तक 90 दिनों की अवधि समाप्त हो चुकी थी। निर्विवाद रूप से, 91 वें दिन यानी 07.09.2019 पर अदालत के समक्ष कोई आरोप पत्र नहीं था। इसे धूसर क्षेत्र कहने का कारण यह है कि क्या होता यदि अपीलकर्ता धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत की मांग करने वाले आवेदन को प्राथमिकता देते

सी. आर. पी. सी. 91 वें दिन यानी 07.09.2019 पर। समय बढ़ाने की मांग करने वाला आवेदन बहुत अधिक लंबित था। द एडिशनल

सत्र न्यायाधीश इस तरह के आवेदन [2023] 6 एस. सी. आर. की अनुमति भी नहीं दे सकते थे।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अभियुक्त व्यक्तियों को बिना नोटिस दिए तुरंत यानी 90 वें दिन या उससे पहले। [पैरा 76] [52-एफ-एच; 53-ए-सी]

3.2 पूरा करने के लिए 180 दिनों तक का समय बढ़ाने से पहले अभियुक्त व्यक्तियों को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए।

जाँच। अपीलार्थियों की ओर से एकमात्र त्रुटि या चूक यह थी कि वे 91 वें दिन वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत की मांग करने वाले उपयुक्त आवेदन को प्राथमिकता देने में विफल रहे। यदि ऐसा आवेदन दायर किया गया होता, तो अदालत के पास उन्हें वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। न्यायालय यह नहीं कह सकता था कि चूंकि विस्तार आवेदन लंबित था, इसलिए वह विस्तार आवेदन के बाद ही एक उचित आदेश पारित करेगा। तय किया गया। यह फिर से कानून की अच्छी तरह से स्थापित स्थिति के विपरीत कुछ होता। यह मुकदमा एन. आई. ए. के साथ-साथ राज्य की जांच एजेंसी के लिए एक आख खोलने वाला है कि यदि वे विस्तार की मांग करना चाहते हैं, तो उन्हें सावधान रहना चाहिए कि इस तरह के विस्तार के लिए अंतिम समय में अनुरोध नहीं किया जाता है। [पैरा 76] [53-सी-ई]

3.3 डिफॉल्ट जमानत पर रिहा होने का अधिकार प्रवर्तनीय बना हुआ है यदि अभियुक्त ने ऐसी जमानत के लिए आवेदन किया है।

जमानत आवेदन के लंबित होने या बाद में आरोप पत्र दायर करने या अदालत के समक्ष अभियोजन पक्ष द्वारा समय बढ़ाने की मांग करने वाली रिपोर्ट के बावजूद। हालाँकि, यदि अभियुक्त डिफॉल्ट जमानत के लिए आवेदन करने में विफल रहता है जब उसे अधिकार प्राप्त होता है, और बाद में मजिस्ट्रेट या किसी अन्य सक्षम अदालत के समक्ष आरोप पत्र, या समय बढ़ाने की मांग करने वाली रिपोर्ट को प्राथमिकता दी जाती है, तो डिफॉल्ट जमानत का अधिकार समाप्त हो जाएगा। अदालत मामले का संज्ञान लेने या जांच पूरी करने के लिए और समय देने के लिए स्वतंत्र होगी, जैसा भी मामला हो, हालांकि आरोपी को अभी भी दंड प्रक्रिया संहिता के अन्य प्रावधानों के तहत जमानत पर रिहा किया जा सकता है। [पैरा 77] [53-एफ-जी]

जिगर उपनाम जिमी प्रवीणचंद्र आदित्य बनाम। की स्थिति

गुजरात 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1290; सैयद मोहम्मद। अहमद काजमी बनाम। राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली की सरकार)

और अन्य (2012) 12 एससीसी 1: [2012] 9 एस. सी. आर. 836-संदर्भित।

जजबीर सिंह @जैसबिर सिंह सामरा @जैसबिर बनाम। राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण
मामला कानून संदर्भ

(2014) 16 एस. सी. सी. 543

संदर्भित किया गया है

पैरा

16

[1997] 3 पूरका एस. सी. आर. 356 संदर्भित

पैरा

16

[2012] 12 एससीआर 1033

संदर्भित किया गया है

पैरा

16

(2020) 10 एससीसी 616

संदर्भित किया गया है

पैरा

16

[1994] 3 पूरका एस. सी. आर. 263 को संदर्भित किया गया

पैरा

18

[2013] 1 एससीआर 1037

पैरा

57,

उस पर भरोसा करें

[2001] 2 एससीआर 878

पैरा

28

संदर्भित किया गया है

[2017] 8 एससीआर 785

29

पैरा

संदर्भित किया गया है

[2018] 12 एससीआर 327

संदर्भित किया गया है

30

पैरा

[2007] 9 एससीआर 1124

संदर्भित किया गया है

31

पैरा

[2002] 2 एससीआर 889

46

पैरा

संदर्भित किया गया है

[1958] एससीआर 283

46

पैरा

संदर्भित किया गया है

(1980) 3 एससीसी 152

48

पैरा

संदर्भित किया गया है

[1991] 3 एससीआर 189

उस पर भरोसा करें

48

पैरा

[2013] 14 एससीआर 983

संदर्भित किया गया है

पैरा

51

[1996] 1 एससीआर 183

संदर्भित किया गया है

पैरा

59

(2021) 2 एससीसी 485

संदर्भित किया गया है

पैरा

59

[2012] 9 एससीआर 836

संदर्भित किया गया है

पैरा

78

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय: आपराधिक अपील

1011 2023 तक।

उच्च न्यायालय के 26.04.2022 दिनांकित निर्णय और आदेश से

2021 के सी. आर. ए. डी. सं. 47 में चंडीगढ़ में पंजाब और हरियाणा सरकार द्वारा।

2023 की आपराधिक अपील सं. 1012।

कॉलिन गोंजाल्विस, सीनियर एड. , संग्राम सारोन, सुश्री रूह-ए-हिना प्रथम

सुश्री मुग्धा, सत्य मित्रा, अधिवक्ता। अपीलार्थियों के लिए।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

संजय जैन, ए. एस. जी., सुश्री दीपवली दत्ता, अन्नम वेंकटेश, राहुल

मिश्रा, पद्मेश मिश्रा, समर सिंह कछवाहा, अरविंद कुमार शर्मा, अधिवक्ता। उत्तरदाता के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

जे. बी. पारदीवाला, जे.

1. चूंकि दोनों शीर्षक वाली अपीलों में उठाए गए मुद्दे समान हैं और चुनौती उच्च न्यायालय द्वारा पारित स्वयं के लिए भी है

न्यायालय, जिन्हें समान रूप से सुनवाई के लिए लिया गया था और इस सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा उनका निपटारा किया जा रहा है।

2. विशेष अवकाश द्वारा ये अपील पाँच विचाराधीन अभियुक्तों के कहने पर की जाती हैं जिन पर दंडनीय अपराध करने का आरोप लगाया जाता है।

भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 120 बी (संक्षेप में, आई. पी. सी.), गैरकानूनी गतिविधियों की धारा क्रमशः 17,18,18 बी और 20

(रोकथाम) अधिनियम, 1967 (संक्षेप में, 'यू. ए. पी. ए.') और विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 4 और 5 (संक्षेप में, '1908

अधिनियम ') और 2021 (ओ एंड एम) के सी. आर. ए.-डी. 47 में चंडीगढ़ में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 26.04.2022 द्वारा पारित आदेश के खिलाफ निर्देशित हैं, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया और इस तरह अभियुक्त व्यक्तियों को सी. आर. पी. सी. की धारा 167 (2) के तहत डिफॉल्ट जमानत पर रिहा करने से इनकार कर दिया।

3. इस न्यायालय के विचार के लिए आने वाले मौलिक मुद्दों को निम्नानुसार तैयार किया जा सकता है:

(i) क्या कोई अभियुक्त दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167 (2) के प्रावधानों के तहत डिफॉल्ट जमानत लेने का हकदार है।

(संक्षेप में, 'सी. आर. पी. सी.') इस आधार पर कि यद्यपि आरोप पत्र कानून में निर्धारित वैधानिक समय अवधि के भीतर दायर किया गया हो सकता है, फिर भी आरोप पत्र द्वारा पारित मंजूरी के वैध आदेश के बिना

सक्षम प्राधिकारी कानून की नजर में कोई आरोप पत्र नहीं है और इसलिए, यह कहना उतना ही अच्छा है जितना कि जांच एजेंसी द्वारा कानून में निर्धारित वैधानिक समय अवधि के भीतर कोई आरोप पत्र दायर नहीं किया गया था? इसे रखने के लिए

अधिक संक्षिप्त रूप से, क्या संबंधित न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के उद्देश्य के लिए किसी भी तरह से इस पर ध्यान देने से रोका गया है

आरोप पत्र जो मंजूरी के वैध आदेश के अभाव में जांच एजेंसी द्वारा दायर किया गया हो सकता है?

(ii) क्या अभियुक्त को डिफॉल्ट जमानत लेने से रोकने के लिए आरोप-पत्र का संज्ञान आवश्यक है या क्या केवल जजवीर सिंह @जैसवीर सिंह समरा @जैसवीर को दाखिल करना आवश्यक है।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

जाँच पूर्ण माने जाने के लिए आरोप-पत्र पर्याप्त होगा? इसे अलग-अलग शब्दों में कहें तो क्या मंजूरी देने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के तहत विचार किया गया है?

(iii) कोई विशेष न्यायालय अभियोजन पक्ष की ओर से मंजूरी प्राप्त करने में विफलता के कारण संज्ञान लेने की स्थिति में नहीं हो सकता है।

अभियुक्त पर यू. ए. पी. ए. और 1908 अधिनियम के तहत मुकदमा चलाया जाता है, लेकिन

ऐसी विफलता दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधानों का पालन न करने के बराबर है ताकि आरोपी को डिफॉल्ट जमानत लेने का अधिकार मिल सके?

(iv) क्या मजिस्ट्रेट और मजिस्ट्रेट के न्यायालय में उपरोक्त अपराधों के लिए आरोप पत्र दायर करने के बाद, मामले को सत्र न्यायालय या नामित न्यायालय को सौंपने से बाद की सभी कार्यवाही इस आधार पर दूषित हो जाएगी कि राष्ट्रीय जांच एजेंसी अधिनियम, 2008 (संक्षेप में, 'एन. आई. ए. अधिनियम') की धारा 16 विशेष न्यायालय को किसी भी अपराध का संज्ञान लेने का अधिकार देती है।

पुलिस को प्राप्त करने पर अभियुक्त को मुकदमे के लिए प्रतिबद्ध किए बिना

रिपोर्ट करें? दूसरे शब्दों में कहें तो क्या जांच एजेंसी की ओर से ऊपर बताए गए अपराध के लिए आरोप पत्र दायर करने में त्रुटि हुई है,

(a) 02.06.2019 पर लगभग 04 बजे: 50 सुबह पुलिस अधिकारियों की एक टीम गश्त कर रही थी। हर्ष चीना से गुजरने वाले वाहन, पंजाब राज्य के अमृतसर जिले के राजा सांसी में कुक्करवाल बस स्टॉप की जांच की जा रही थी। उस समय सिख समुदाय के दो लड़कों को बिना नंबर प्लेट के मोटरसाइकिल पर यात्रा करते हुए देखा गया था। रुकने के लिए कहने पर वे भाग गए। भागने की प्रक्रिया में, एक नीले रंग का थैला जो उनके हाथों में था

पिलियन सवार नीचे गिर गया। थैले से एक मोबाइल फोन और दो हथगोले बरामद किए गए। ऐसी परिस्थितियों में, 1908 के अधिनियम के तहत दंडनीय अपराधों के लिए पुलिस स्टेशन राजा सांसी, जिला अमृतसर (ग्रामीण), पंजाब में प्राथमिकी संख्या 90 दर्ज की गई। इस प्रकार, 02.06.2019 पर एफ़. आई. आर. दर्ज की गई।

(ख) 05.06.2019 पर पंजाब पुलिस ने यू. ए. पी. ए. की धारा 17,18,18 बी और 20 जोड़ी।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

(ग) आई. डी. 1 पर पंजाब पुलिस द्वारा आरोपी जसबिर सिंह और वरिंदर सिंह को गिरफ्तार किया गया।

(घ) 27.07.2019 पर, सुखप्रीत सिंह उर्फ बुद्धा (अभियुक्त संख्या 8) को तत्काल एफ. आई. आर. और धारा के तहत अपराध में आरोपी के रूप में प्रस्तुत किया गया था।

120 आई. पी. सी. का बी जोड़ा गया था।

(ई) 18.08.2019 पर, अपीलार्थी सं. 3 कुलबीर सिंह उर्फ कुलबीर और अपीलार्थी सं. 4 दर्शन सिंह की पत्नी मंजीत कौर

सीआरएल। ए. 2023 की संख्या 1011) को गिरफ्तार किया गया। अभियोजन पक्ष का मामला है कि कुलबीर सिंह और मंजीत कौर संबंधित समय पर कंबोडिया में रह रहे थे। हरमीत सिंह और कुलविंदर सिंह को भी आरोपी बनाया गया था।

(च) पंजाब पुलिस ने अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर के समक्ष यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी (2) (बी) के प्रावधान के तहत जांच पूरी करने के लिए समय बढ़ाने के लिए आवेदन किया। यह है। यह ध्यान देने योग्य है कि विस्तार की मांग करने वाला आवेदन गिरफ्तारी की तारीख से 90 दिनों की समाप्ति से दो दिन पहले दायर किया गया था। यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी (2) (बी) सक्षम अदालत को सी. आर. पी. सी. की धारा 167 के तहत 90 दिनों की अवधि को 180 दिनों तक बढ़ाने का अधिकार देती है।

(छ) 07.09.2019 पर, तरणबीर सिंह (सी. आर. एल. के अपीलार्थी। ए. 2023 की संख्या 1012) को तत्काल एफ. आई. आर. में अभियुक्त के रूप में प्रस्तुत किया गया। तरणबीर सिंह उस समय मलेशिया में रह रहे थे।

(ज) 11.09.2019 पर तरणबीर सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया।

(i) 17.09.2019 पर, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर ने जांच पूरी करने की अवधि 90 दिनों से बढ़ाकर 180 दिन कर दी। इस स्तर पर यह ध्यान देना उचित है कि सभी अभियुक्त व्यक्तियों को सुनवाई का अवसर देने के बाद अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा विस्तार दिया गया था।

उप-मंडल न्यायिक मजिस्ट्रेट, अजनाला। यह रिपोर्ट (आरोप पत्र) ऊपर बताए गए अपराध के लिए प्राथमिकी संख्या 90 के संबंध में दायर किया गया था। 15.11.2019 पर मजिस्ट्रेट की अदालत के समक्ष एक आम आरोप पत्र दायर किया गया था। चूंकि अभियुक्त सं. 1 और 2 को क्रमशः 08.06.2019 पर गिरफ्तार किया गया था, यह कहा जा सकता है कि आरोप पत्र उनकी औपचारिक गिरफ्तारी की तारीख से 161 वें दिन प्रस्तुत किया गया था।

जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

अभियुक्त सं। 3 & 4 18.08.2019 पर गिरफ्तार किए गए थे; उनके लिए, गिरफ्तारी के बाद 90 दिनों के भीतर आरोप पत्र दायर किया गया था, और आरोपी नंबर 5 के मामले में, जिसे 11.09.2019 पर गिरफ्तार किया गया था, यह गिरफ्तारी के 66 दिनों के भीतर दायर किया गया था। इस प्रकार, अपीलार्थी संख्या 180 दिनों की विस्तारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर किया गया था। 1 और 2 चिंतित हैं।

(के) 16.11.2019 पर, एस. डी. जे. एम., अजनाला ने सभी अभियुक्त व्यक्तियों की कार्यवाही स्थगित कर दी।

(m) 25.11.2019 पर, एस. डी. जे. एम., अजनाला ने सी. आर. पी. सी. की धारा 209 के प्रावधानों के तहत मामले को सत्र न्यायालय को सौंप दिया, जैसा कि अपराधों की सुनवाई विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा की जा सकती थी। अगली तारीख 06.12.2019 तय की गई थी।

(एन) 06.12.2019 पर, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर, बस

बिना संज्ञान लिए मामला दर्ज किया गया।

(o) 22.02.2020 पर, एन. आई. ए., नई दिल्ली ने धारा 17,18,18 बी और 20 के तहत तत्काल मामले को आर. सी.-07,2020/एन. आई. ए./डी. एल. आई. के रूप में फिर से दर्ज किया।

(पी) आई. डी. 1 पर विशेष न्यायाधीश, सी. बी. आई. पंजाब, एस. ए. एस. नगर, मोहाली ने अतिरिक्त सत्र न्यायालय से पूरी फाइल प्राप्त की। न्यायाधीश, अमृतसर। इस तरह, अभियोजन पक्ष को अंततः एन. आई. ए./यू. ए. पी. ए. के तहत गठित विशेष अदालत में स्थानांतरित कर दिया गया।

(क्यू) 26.10.2020 पर, जिला मजिस्ट्रेट, अमृतसर ने 1908 अधिनियम के तहत अभियोजन के लिए मंजूरी दी।

(r) 12.11.2020 पर, विशेष न्यायाधीश, एन. आई. ए. ने दर्ज किया कि अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ अपराधों के लिए मुकदमा चलाने की मंजूरी

1908 अधिनियम पारित कर दिया गया था और यू. ए. पी. ए. के तहत मंजूरी का इंतजार किया जा रहा था।

(एस) यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी के तहत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत डिफॉल्ट जमानत के लिए एक आवेदन विशेष न्यायाधीश एन. आई. ए., एस. ए. एस. नगर, मोहाली के समक्ष अनिवार्य रूप से इस आधार पर दायर किया गया था कि हालांकि आरोप पत्र 180 दिनों की विस्तारित अवधि के भीतर दायर किया गया था, फिर भी इसे अभाव [2023] 6 एस. सी. आर. के कारण अधूरा कहा जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

यू. ए. पी. ए. के तहत मंजूरी। ऐसी परिस्थितियों में, स्थिति थी

मानो कोई आरोप पत्र न हो। (टी) 16.12.2020 पर, अभियोजन पक्ष ने 1908 के अधिनियम के तहत जिला मजिस्ट्रेट, अमृतसर द्वारा जारी मंजूरी देने का आदेश प्रस्तुत किया।

न्यायालय के समक्ष।

(यू) 17.12.2020 पर, एन. आई. ए. ने अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा डिफॉल्ट जमानत की मांग करने वाले आवेदन पर अपना जवाब दाखिल किया।

(v) 17.12.2020 पर, विशेष अदालत ने अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा डिफॉल्ट जमानत की मांग करने वाले आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया कि

आरोप पत्र पहले ही दाखिल किया जा चुका था।

(d) 06.01.2021 पर, पंजाब सरकार ने यू. ए. पी. ए. के तहत अभियोजन के लिए मंजूरी दे दी।

(x) 07.01.2021 पर, विशेष न्यायालय ने राज्य के गृह विभाग से यू. ए. पी. ए. के तहत मंजूरी की प्राप्ति को स्वीकार किया।

पंजाब सरकार।

(y) 18.01.2021 पर, अपीलकर्ताओं ने दिनांक 17.12.2020 के आदेश के खिलाफ पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में अपील दायर की।

विशेष अदालत द्वारा डिफॉल्ट जमानत आवेदन को खारिज करते हुए पारित किया गया। (जेड) 17.03.2021 पर, भारत सरकार ने अपीलार्थियों पर मुकदमा चलाने के लिए यूएपीए की धारा 45 (1) के तहत मंजूरी दी।

(आ) 22.03.2021 पर, एन. आई. ए. द्वारा विशेष न्यायाधीश, एन. आई. ए., पंजाब के समक्ष एक पूरक आरोप पत्र दायर किया गया था।

अभियोजन के लिए प्रतिबंध।

(ए. बी.) आई. डी. 1 पर, विशेष न्यायालय, एन. आई. ए. ने ऊपर बताए गए अपराधों का संज्ञान लिया और अभियुक्त व्यक्तियों को नोटिस जारी किए।

(एड) 26.04.2022 पर, पंजाब और हरियाणा के उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया। विशेष अदालत ने डिफॉल्ट जमानत की याचिका को खारिज कर दिया।

5. इसे और अधिक स्पष्ट और स्पष्ट बनाने के लिए, हम तिथियों और घटनाओं के उपरोक्त कालक्रम को निम्नानुसार काटते हैं:

(i) 02.06.2019-एफ़. आई. आर. दर्ज की गई थी; जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

(ii) 08.06.2019-पहले और दूसरे अपीलार्थियों की गिरफ्तारी;
(iii) 18.08.2019-तीसरे और चौथे अपीलार्थियों की गिरफ्तारी;

(iv) 11.09.2019-तरणबीर सिंह (सी. आर. एल. के अपीलार्थी) की गिरफ्तारी। ए. 2023 की संख्या 1012) (v) 17.09.2019-जाँच की अवधि को 90 दिनों से बढ़ाकर 180 दिन करना;

(vi) 15.11.2019-आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया;

(vii) 14.12.2020-डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए आवेदन;

(viii) 16.12.2020-1908 के तहत दिनांकित 26.10.2020 मंजूरी आदेश

अधिनियम दायर किया गया;

(ix) 06.01.2021-यू. ए. पी. ए. के तहत मंजूरी आदेश जारी किया गया था;

(x) 17.03.2021-एन. आई. ए. को जाँच के हस्तांतरण के बाद यू. ए. पी. ए. की धारा 45 (1) के तहत गृह मंत्रालय द्वारा मंजूरी; और

(xi) 22.03.2021-पूरक आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया है।

एनआईए द्वारा।

6. ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, अपीलार्थी (मूल)

अभियुक्त व्यक्ति) वर्तमान अपीलों के साथ इस न्यायालय के समक्ष हैं।

अभियुक्त की ओर से प्रस्तुतियाँ

लोग

7. विद्वान वरिष्ठ वकील श्री कॉलिन गोंजाल्विस और संबंधित अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री सत्य मित्रा जोरदार रूप से प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों को डिफ़ॉल्ट जमानत का लाभ देने से इनकार करने में एक गंभीर त्रुटि की है।

8. दोनों विद्वान वकीलों के अनुसार, मंजूरी के बिना दायर किया गया आरोप पत्र एक अधूरा आरोप पत्र है और इस तरह के अधूरे आरोप पत्र के आधार पर कोई संज्ञान नहीं लिया जा सकता है। यह प्रस्तुत किया गया था कि अंतिम रिपोर्ट दाखिल की जाती है ताकि संबंधित अदालत इस बारे में अपना दिमाग लगा सके कि अपराध का संज्ञान लिया जाना चाहिए या नहीं। अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से प्रचार किए गए प्रस्तुतिकरण का योग और सार यह है कि आंशिक आरोप पत्र नहीं हो सकता है। मंजूरी के बिना दायर किया गया आरोप पत्र एक अधूरा आरोप पत्र है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के अर्थ में पुलिस रिपोर्ट की

आवश्यकता को पूरा नहीं करता है। इस तरह का आरोप पत्र भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (5) के अनुरूप नहीं होगा।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

9. इस तरह के अधूरे आरोप पत्र का उपयोग पुलिस द्वारा वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत की मांग करने वाले आवेदन को विफल करने के लिए एक उपकरण या उपकरण के रूप में नहीं किया जा सकता है। यह.

यह तर्क दिया गया कि यू. ए. पी. ए. के तहत दायर आरोप पत्र हर तरह से पूर्ण होना चाहिए। दोनों विद्वान वकीलों द्वारा इस तथ्य पर जोर दिया गया कि मंजूरी आदेश को आरोप पत्र के साथ होना चाहिए ताकि संबंधित अदालत संज्ञान ले सके।

10. यह आगे तर्क दिया गया कि जब सामान्य तुलना की बात आती है तो जांच एजेंसी द्वारा केवल साक्ष्य एकत्र करना पर्याप्त नहीं है

यू. ए. पी. ए. के तहत आपराधिक मामले। जाँच को तब तक पूर्ण नहीं कहा जा सकता जब तक कि एकत्र किए गए तथ्यों की जाँच केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त प्राधिकारी द्वारा नहीं की जाती और ऐसा प्राधिकरण अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं करता।

11. गैरकानूनी गतिविधियों (रोकथाम) के क्रमशः नियम 3 और 4 पर दोनों विद्वान वकीलों द्वारा हमारा ध्यान आकर्षित किया गया था।

(अनुशंसा और अभियोजन की मंजूरी) नियम, 2008 (संक्षेप में, 'नियम 2008'), जो प्राधिकरण द्वारा अनुशंसा करने के लिए एक समय सीमा और उसके बाद अभियोजन की मंजूरी के लिए एक समय सीमा प्रदान करता है। यह तर्क दिया गया कि यूएपीए और नियम 2008 के प्रावधान बनाए गए हैं

इसके तहत मंजूरी का अनुदान समयबद्ध करें। 12. दोनों विद्वान वकीलों द्वारा यह मुखरता से प्रस्तुत किया गया था कि ऊपर निर्दिष्ट नियम 2008 के नियम 3 और 4 के साथ क्रमशः 90 से 180 दिनों तक समय का विस्तार, मंजूरी के अनुदान को अनिवार्य रूप से समयबद्ध बनाता है। वही केवल एक निष्कर्ष की ओर ले जाता है कि अंतिम रिपोर्ट माने जाने के लिए मंजूरी आदेश के साथ होना चाहिए।

13. यह तर्क दिया गया कि चूंकि मामले में आरोप पत्र 15.11.2019 पर दायर किया गया था, इसलिए जांच एजेंसी द्वारा सामग्री एकत्र की गई थी सक्षम प्राधिकारी द्वारा 15.11.2019 पर ही प्राप्त किया जाना चाहिए था। सक्षम प्राधिकारी की रिपोर्ट उसके सात दिन बाद यानी 22.11.2019 द्वारा तैयार की जानी चाहिए थी। नियम 4 को देखते हुए, मंजूरी

29.11.2019 द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए था। हालांकि, दोनों विद्वान वकीलों के अनुसार, रिपोर्ट केवल एक साल और तीन महीने की देरी के बाद 12.03.2021 पर दायर की गई थी। मंजूरी 17.03.2021 पर दी गई थी, जो 180 दिनों की अवधि के बाद दी गई थी, जो इस तारीख को समाप्त हो गई थी।

10.03.2020 . डिफ़ॉल्ट जमानत आवेदन 14.12.2020 पर स्थापित किया गया था।

14. यह भी तर्क दिया गया कि एन. आई. ए. के पास आई. डी. 1 पर जांच संभालने के बाद जज सिंह @जैसबिर सिंह सामरा @जैसबिर पर फाइल करने या पेश करने के लिए 49 दिन बचे थे।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

180 दिनों की सीमा की समाप्ति से पहले उचित मंजूरी दर्ज करें। डिफॉल्ट जमानत आवेदन 14.12.2020 पर दायर किया गया था। मंजूरी, जो केवल 17.03.2021 पर दी गई थी, ऊपर निर्दिष्ट 2008 के नियमों के क्रमशः नियम 3 और 4 द्वारा निर्धारित समय अवधि को देखते हुए 29.11.2019 पर दी जानी चाहिए थी। ऐसी परिस्थितियों में, दोनों विद्वान वकीलों ने प्रस्तुत किया कि इस तरह की विलंबित मंजूरी, भले ही अन्यथा वैध हो, अभियुक्त व्यक्तियों के डिफॉल्ट जमानत लेने के अक्षम्य अधिकार को विफल नहीं कर सकती है।

15. अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से पेश दोनों विद्वान वकीलों द्वारा प्रस्तुत की गई दलील का दूसरा अंग यह है कि आरोप पत्र एस. डी. जे. एम., अजनाला की अदालत में दायर नहीं किया जा सकता था क्योंकि एन. आई. ए. के तहत कार्यवाही केवल विशेष अदालत में की जानी है जिसे अधिसूचित किया गया है।

कि एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 के साथ पठित एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 को देखते हुए, सी. आर. पी. सी. की धारा 193 के प्रावधान लागू नहीं होंगे। यह तर्क दिया गया कि इसके बाद मजिस्ट्रेट और मजिस्ट्रेट के न्यायालय के समक्ष आरोप पत्र दायर करने में जांच एजेंसी की ओर से गलती, मामले को सत्र न्यायालय को सौंपना एन. आई. ए. अधिनियम के प्रावधानों और यू. ए. पी. ए. के प्रावधानों के बिल्कुल विपरीत था, जिसने बाद की सभी कार्यवाही को गैर-कानूनी बना दिया। अधिकारिता और इसलिए, एक शून्यता।

16. उपरोक्त प्रस्तुतियों के समर्थन में, निम्नलिखित मामले कानून पर निर्भरता रखी गई है:

(i) फखरी आलम बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य, 2021 एससीसी ऑनलाइन

532

(ii) अब्दुल अज़ीज़ पी. वी. और अन्य बनाम। राष्ट्रीय जांच एजेंसी, (2014) 16 एस. सी. सी. 543

(iii) चित्रा रामकृष्ण बनाम। केंद्रीय जांच ब्यूरो, (2022) एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 3124

(iv) रामभाई नाथभाई गढ़वी और अन्य बनाम। गुजरात राज्य (1997) 7 एस. सी. सी. 744

(v) अशरफखान बनाम। गुजरात राज्य (2012) 11 एस. सी. सी. 606

(vi) बिक्रमजीत सिंह बनाम। पंजाब राज्य, (2020) 10 एससीसी 616 [2023] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

17. ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, दोनों विद्वान वकीलों ने प्रार्थना की कि उनकी अपीलों में योग्यता होने के कारण, उन्हें अनुमति दी जा सकती है और आरोपी व्यक्तियों को डिफॉल्ट जमानत पर रिहा करने का आदेश दिया जा सकता है।

एन. आई. ए./एन. आई. ए. के संघ के बारे में प्रस्तुतियाँ

भारत 18. दूसरी ओर, विद्वान ए. एस. जी. श्री संजय जैन ने दोनों अपीलों का जोरदार विरोध करते हुए कहा कि यह तय किया गया कानून है।

कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत अक्षम्य अधिकार किसी आरोपी को केवल तभी प्राप्त होता है जब आरोप पत्र उसमें निर्धारित समय के भीतर या किसी विशेष अदालत के तहत किसी सक्षम अदालत द्वारा विस्तारित समय के भीतर दायर नहीं किया जाता है। कानून। वह प्रस्तुत करेंगे कि अधिकार उपलब्ध नहीं होगा यदि आरोप पत्र ऊपर बताए गए समय के भीतर दायर किया जाता है या यदि आरोप पत्र सीआरपीसी की धारा 167 (2) के तहत आवेदन करने से पहले दायर किया जाता है। श्री जैन ने संजय दत्त बनाम के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा करके अपनी दलील को मजबूत करने की मांग की। राज्य ने (1994) 5 एस. सी. सी. 410 (पैरा 48 और 53 (2) (बी)) और गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय के मामले में रिपोर्ट की। राहुल मोदी और अन्य

(2022) एस. सी. सी. ऑनलाइन 153 (पैरा 16) में सूचित किया गया।

19. श्री जैन ने दृढ़ता से प्रस्तुत किया कि अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से आरोप पत्र प्रस्तुत करने में कोई योग्यता नहीं है कि

यू. ए. पी. ए. या 1908 अधिनियम के तहत आवश्यक मंजूरी के बिना अधूरा है। दूसरे शब्दों में, श्री जैन के अनुसार, अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से किए गए विवाद में कोई योग्यता नहीं है कि हालांकि

मंजूरी के बिना, इसे वैधानिक समय अवधि के भीतर आरोप पत्र दाखिल नहीं करने के बराबर कहा जा सकता है।

20. उपरोक्त संदर्भ में, श्री जैन ने निम्नलिखित पहलुओं पर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया:

ए। अभियोजन के लिए मंजूरी देने का कार्य, कई कानूनों में, जांच एजेंसी के अलावा किसी अन्य प्राधिकरण को सौंपा गया है और इस प्रकार यह जांच एजेंसी के अधिकार क्षेत्र में नहीं है कि वह अनुदान दे

इस तरह की मंजूरी। बी। वर्तमान मामले में, राज्य जांच एजेंसी (एस. आई. ए.) द्वारा पहला आरोप पत्र दाखिल करने के समय, एस. आई. ए. पहले ही मांग कर चुका था।

उपयुक्त सरकारों से अभियोजन के लिए मंजूरी।

जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

और यू. ए. पी. ए. उपयुक्त सरकारों द्वारा प्रदान किया गया था और न्यायालय को सूचित किया गया था, जैसा कि ऊपर बताए गए समय से स्पष्ट है। डी। अभियोजन के लिए मंजूरी देने का सवाल केवल संज्ञान लेने के चरण में प्रासंगिक है, जो पूरी तरह से जांच के चरण से अलग एक अलग चरण है। [रिलायंस को सुरेश कुमार भीकमचंद जैन बनाम पर रखा गया है। महाराष्ट्र राज्य और

दूसरा, (2013) 3 एस. सी. सी. 77 @पारस 17-19]

21. श्री जैन ने प्रस्तुत किया कि कुछ अभियुक्त व्यक्ति थे

भगोड़ा घोषित, दाखिल करने के लिए समय बढ़ाने का अनुरोध

जाँच एजेंसी द्वारा 04.09.2019 पर आरोप पत्र दायर किया गया था (यानी 90 दिनों की अवधि के भीतर), उक्त आवेदन पर अंततः 17.09.2019 पर सुनवाई हुई और सुनवाई प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप थी क्योंकि सभी अभियुक्त व्यक्तियों का विधिवत प्रतिनिधित्व किया गया था और समय बढ़ाने की मांग करने वाले आवेदन पर अभियुक्त के साथ-साथ अभियोजन पक्ष की ओर से दलीलें सुनी गईं।

22. श्री जैन ने आगे कहा कि जाँच की जा रही है।

राज्य पुलिस द्वारा निष्पादित और उसी को ध्यान में रखते हुए, राज्य पुलिस ने जे. एम. एफ. सी. के समक्ष आई. डी. 1 पर आरोप पत्र दाखिल करने के लिए आगे बढ़े, जहां अभियुक्त व्यक्तियों को उनकी गिरफ्तारी के समय पहली बार पेश किया गया था और इसे ध्यान में रखते हुए, मूल आरोप पत्र मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिसमें संबंधित समय पर अभियुक्त व्यक्तियों की अभिरक्षा थी और इस प्रकार, इसे सी. आर. पी. सी. की धारा 167 का गैर-अनुपालन नहीं कहा जा सकता है। [रिलायंस: सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (सुप्रा) @Paras 13-17 और राहुल मोदी (सुप्रा) @पैरा 16]।

23. श्री जैन ने आगे कहा कि मामला अंततः था

सत्र न्यायालय और अंत में एन. आई. ए./यू. ए. पी. ए. के लिए गठित विशेष न्यायालय के लिए प्रतिबद्ध (एन. आई. ए. द्वारा जांच का कार्यभार संभालने के बाद)

एन. आई. ए. द्वारा आर. सी.-07,2020/एन. आई. ए./डी. एल. आई.) के रूप में पुनः पंजीकृत होने पर और अंत में अभियोजन अनुमोदनों की जांच करने के बाद ही विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया। 1908 के अधिनियम के तहत मंजूरी जिला मजिस्ट्रेट, अमृतसर द्वारा 26.10.2020 पर प्राप्त की गई थी, जिसे विशेष न्यायाधीश, एन. आई. ए. द्वारा 12.11.2020 पर विधिवत दर्ज किया गया था। पंजाब सरकार द्वारा यू. ए. पी. ए. के तहत मंजूरी <आई. डी1> पर दी गई थी। विशेष अदालत ने इसे 07.01.2021 पर दर्ज किया। इसके अलावा, सरकार [2023] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

भारत सरकार ने 17.03.2021 पर यू. ए. पी. ए. की धारा 45 (1) के तहत मंजूरी दी।

24. अंत में, श्री जैन ने बताया कि सभी अभियुक्त व्यक्तियों पर मुकदमा चल रहा है और अब तक बारह गवाहों से पूछताछ की जा चुकी है।

प्रतिबंधों की वैधता और वैधता या जिस तरीके और तरीके से संज्ञान लिया गया था, उसे ध्यान में रखते हुए ऐसे मुद्दों को उठाया जा सकता है न्यायालय के समक्ष। श्री जैन के अनुसार, इस समय अभियुक्त व्यक्तियों के लिए यह कहने की कोई गुंजाइश नहीं है कि उन्हें डिफॉल्ट जमानत पर रिहा किया जाए।

कुछ प्रासंगिक स्थिति प्रावधान

25. दोनों तरफ से प्रचार किए गए प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों को स्वीकार करने से पहले, हमें दंड प्रक्रिया संहिता, यू. ए. पी. ए., 1908 अधिनियम और एन. आई. ए. अधिनियम के कुछ प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों पर गौर करना चाहिए।

26. पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (संक्षेप में, 'दंड प्रक्रिया संहिता, 1898') में, धारा 167 में किसी अपराध की जांच 24 घंटे के भीतर पूरी नहीं होने की स्थिति में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया निर्धारित की गई थी। सी. आर. पी. सी., 1898 में धारा 167, अपराध की प्रकृति या सजा की परवाह किए बिना, 24 घंटे के भीतर या बाहर से 15 दिनों के भीतर जांच के समापन पर आधारित थी।

27. भारत के विधि आयोग ने अपनी 41 वीं रिपोर्ट में जांच पूरी करने की समय सीमा को बढ़ाकर 60 दिन करने की सिफारिश की थी। नई सी. आर. पी. सी. ने विधि आयोग की सिफारिशों को प्रभावी बना दिया। अधिनियमित धारा 167 में अपराध की प्रकृति या सजा की परवाह किए बिना 60 दिनों की समय सीमा का प्रावधान किया गया है। वर्ष 1978 में धारा 167 में संशोधन किया गया था। धारा 167 (2) जो अभी तक मौजूद वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक है, निम्नलिखित प्रभाव से है:

“ 167 (2) . जिस मजिस्ट्रेट को इस धारा के तहत एक आरोपी व्यक्ति को भेजा जाता है, वह समय-समय पर, चाहे उसके पास मामले की सुनवाई करने की अधिकारिता हो या न हो, ऐसे मजिस्ट्रेट को ऐसी हिरासत में अभियुक्त को हिरासत में रखने के लिए अधिकृत कर सकता है, जो ऐसा मजिस्ट्रेट पूरी तरह से पंद्रह दिनों से अधिक की अवधि के लिए उचित समझता है; और यदि उसे मामले की सुनवाई करने या मुकदमे के लिए इसे करने का कोई अधिकार नहीं है, और वह आगे हिरासत को अनावश्यक समझता है, तो वह आरोपी को मजिस्ट्रेट के पास भेजने का आदेश दे सकता है।

ऐसी अधिकारिता -

जजबीर सिंह @जे. एस. बी. आर. सिंह समरा @JASBIR राष्ट्रीय जांच एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

बशर्ते कि, (क) मजिस्ट्रेट अभियुक्त को हिरासत में लेने के लिए अधिकृत कर सकता है।

व्यक्ति, पुलिस की हिरासत से परे,

पंद्रह दिनों की अवधि, यदि वह संतुष्ट है कि पर्याप्त है

ऐसा करने के लिए आधार मौजूद हैं, लेकिन कोई मजिस्ट्रेट अधिकृत नहीं करेगा

इसके तहत हिरासत में आरोपी व्यक्ति को हिरासत में लेना

इससे अधिक की कुल अवधि के लिए अनुच्छेद,

■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■ ■

(i) नब्बे दिन, जहाँ जाँच किसी अपराध से संबंधित हो।

मृत्युदण्ड, आजीवन कारावास या कारावास से दंडनीय

दस साल से कम की अवधि के लिए;

((ii)) साठ दिन, जहाँ जाँच किसी अन्य मामले से संबंधित हो।

अपराध,

और, नब्बे दिनों की उक्त अवधि की समाप्ति पर, या साठ

जिस दिन भी मामला हो, आरोपी व्यक्ति को रिहा कर दिया जाएगा।

जमानत पर यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और प्रस्तुत करता है, और प्रत्येक

इस उप-धारा के तहत जमानत पर रिहा किया गया व्यक्ति माना जाएगा

(ख) कोई भी मजिस्ट्रेट अभियुक्त को हिरासत में रखने के लिए अधिकृत नहीं करेगा।
तहत पुलिस की अभिरक्षा जब तक कि आरोपी

इस धारा के

पहली बार व्यक्तिगत रूप से उनके सामने पेश किया गया और

बाद में हर बार जब तक आरोपी हिरासत में नहीं रहता

पुलिस की, लेकिन मजिस्ट्रेट हिरासत को आगे बढ़ा सकते हैं

अभियुक्त को या तो पेश करने पर न्यायिक हिरासत में

व्यक्ति या इलेक्ट्रॉनिक वीडियो लिंकेज के माध्यम से;

(ग) द्वितीय श्रेणी का कोई मजिस्ट्रेट, जो विशेष रूप से सशक्त नहीं है।
संबंध में, निरोध को अधिकृत करेगा

उच्च न्यायालय द्वारा इस

पुलिस की हिरासत "।

28. उदय मोहनलाल मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ

रिया वी। महाराष्ट्र राज्य ने (2001) 5 एस. सी. सी. 453 में रिपोर्ट किया है

हिरासत में, एक व्यक्ति को 24 घंटे से अधिक समय तक गिरफ्तार किया जाता है। उद्देश्य यह है कि अभियुक्त को बिना किसी देरी के मजिस्ट्रेट के सामने लाया जाना चाहिए। उर्स, जो प्रावधान, वास्तव में, संविधान के अनुच्छेद 22 (2) के तहत देर से बनाए गए संवैधानिक प्रावधान के अनुरूप है।

6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

धारा 167 धारा 57 का पूरक है। धाराओं के तहत किसी व्यक्ति को हिरासत में रखने की शक्ति दी जाती है, जबकि पुलिस शिकायती कार्रवाई जारी रखती है। इसलिए, धारा 167 एक ऐसा प्रावधान है जो अधिकतम अवधि निर्धारित करते हुए अभियुक्त को हिरासत में रखने की अनुमति देने वाली रणनीति को अधिकृत करता है। उदय मोहनलाल आचार्य (ऊपर) में यह न्यायालय

धारा 167 से निपटने के लिए निम्नलिखित निर्धारित किया गया है:

" 5. धारा 167 का यह प्रावधान वास्तव में पूरक है।

धारा 57, इस सिद्धांत के अनुरूप है कि

अभियुक्त को यह माँग करने का अधिकार है कि न्याय में देरी न हो। अभियुक्त के समक्ष पेश किए जाने की आवश्यकता का उद्देश्य

मजिस्ट्रेट मजिस्ट्रेट को यह देखने में सक्षम बनाता है कि रिमांड आवश्यक है और आरोपी को यह करने में भी सक्षम बनाता है कि

प्रतिनिधित्व जो वह करना चाहे। धारा 167 के तहत किसी व्यक्ति को हिरासत में रखने की शक्ति दी गई है, जबकि पुलिस जाँच जारी रखती है और मजिस्ट्रेट द्वारा जाँच शुरू करने से पहले। इसलिए, धारा 167 वह प्रावधान है जो मजिस्ट्रेट को किसी आरोपी को हिरासत में रखने की अनुमति देता है और अधिकतम अवधि निर्धारित करता है जिसके लिए इस तरह के निरोध का आदेश दिया जा सकता है। निर्धारित किया गया है

न्यायिक घोषणा द्वारा "बाध्यकारी जमानत" कहा गया है और इस तरह की जमानत को अध्याय 33 के तहत जमानत माना जाएगा। अभियुक्त को जमानत पर रिहा होने का अधिकार निरोध की अधिकतम अवधि समाप्त होने के बाद

धारा 167 के तहत केवल तभी इनकार किया जा सकता है जब कोई अभियुक्त जमानत नहीं देता है, जैसा कि उक्त धारा के स्पष्टीकरण I से स्पष्ट है। धारा 167 की उप-धारा (2) का परंतुक अनिश्चित काल के लिए शरारत को ठीक करने के लिए एक लाभकारी प्रावधान है।

जाँच को लंबा करना और इस तरह स्वतंत्रता को प्रभावित करना

एक नागरिक "।

29. पुनः, राकेश कुमार पॉल बनाम मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ की धारा पर बहुत विस्तृत विचार किया गया है। स्टेट सैम, (2017) 15 एस. सी. सी. 67 में रिपोर्ट किया गया। उपरोक्त मामले में इस न्यायालय ने धारा 167 के प्रावधान के विधायी इतिहास की समीक्षा की।

यह न्यायाधीश सिंह @जैस्विर सिंह समरा @JASBIR राष्ट्रीय जांच एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

उपरोक्त मामले में इस बात पर जोर दिया गया कि धारा 167 पर बहस को शीघ्र निष्कर्ष के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए बंधन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के दृष्टिकोण से। इस अदालत ने यह भी माना कि डिफॉल्ट जमानत का अधिकार एक अक्षम्य अधिकार है जिसे अभियोजन पक्ष द्वारा निराश नहीं किया जा सकता है। निम्नलिखित में निर्धारित किया गया था

37 , 38 और 39:

" 37. इस न्यायालय के पास पूरे मामले के कानून की समीक्षा करने का अवसर था

भारत संघ में विषय V. निराला यादव [का संघ

आचार्य बनाम. महाराष्ट्र राज्य [उदय मोहनलाल] आचार्य बनाम. महाराष्ट्र राज्य, (2001) 5 एससीसी 453: 2001 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 760] और उस निर्णय में निष्कर्ष पर पहुंचे। हम निष्कर्ष (3) से संबंधित हैं जो इस प्रकार है:

: (उदय मोहनलाल आचार्य मामला [उदय मोहनलाल]

आचार्य बनाम. महाराष्ट्र राज्य, (2001) 5 एससीसी 453: 2001

एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 760], एस. सी. सी. पी. 473 , पैरा 13)

" 13. (3) 90 दिनों या 60 दिनों की उक्त अवधि की समाप्ति पर, जैसा भी मामला हो, अभियुक्त के पक्ष में जमानत पर रिहा होने के लिए एक अक्षम्य अधिकार प्राप्त होता है।

में जाँच एजेंसी द्वारा चूक का खाता निर्धारित अवधि के भीतर जाँच पूरी करना और अभियुक्त जमानत पर रिहा होने का हकदार है, यदि वह

द्वारा निर्देशित जमानत के लिए तैयार और प्रस्तुत करता है

मजिस्ट्रेट "।

38. इस अदालत ने संजय दत्त [संजय दत्त बनाम संजय दत्त] में दिए गए फैसले पर भी विचार किया। राज्य (1994) 5 एस. सी. सी. 410: 1994 एससीसी (सीआरआई)

1433] और नोट किया कि द्वारा निर्धारित सिद्धांत संविधान पीठ इस आशय की है कि यदि आरोप-पत्र

दायर नहीं किया गया है और "डिफॉल्ट जमानत" का अधिकार परिपक्व हो गया है

असमर्थनीयता की स्थिति, इसे निराश नहीं किया जा सकता है

किसी भी बहाने पर अभियोजन। अभियुक्त अपनी स्वतंत्रता का लाभ उठा सकता है।

यह कहते हुए एक आवेदन दायर करके कि वैधानिक अवधि के लिए

आरोप पत्र या चालान दाखिल करने की अवधि समाप्त हो गई है और वही

अभी तक दायर नहीं किया गया है और इसलिए अक्षम्य अधिकार
अपने पक्ष में अर्जित किया है और आगे आरोपी है
जमानत बांड प्रस्तुत करने के लिए तैयार।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

39. इस न्यायालय ने यह भी नोट किया कि संभावना के अलावा

अभियोजन पक्ष अक्षम्य अधिकार को विफल करता है, ऐसे अवसर भी आते हैं जब अदालत भी अक्षम्य अधिकार को विफल कर देती है। मोहम्मद को संदर्भ दिया गया था। इकबाल मदार

शेख वी। महाराष्ट्र राज्य [मो. इकबाल मदार

शेख वी। महाराष्ट्र राज्य (1996) 1 एस. सी. सी. 722: 1996 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 202] जिसमें यह कहा गया था कि कुछ अदालतें "डिफ़ॉल्ट जमानत" के लिए आवेदन को कुछ दिनों के लिए लंबित रखती हैं ताकि इस बीच एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया जा सके। यद्यपि अभियोजन पक्ष के साथ-साथ कुछ न्यायालयों दोनों की ओर से इस तरह की प्रथा को बहुत दृढ़ता से और जोरदार रूप से हतोत्साहित किया जाना चाहिए, हम दोहराते हैं कि मध्यावधि के दौरान "डिफ़ॉल्ट जमानत" के लिए अभियुक्त के अक्षम्य अधिकार को विफल करने के लिए किसी भी छल का सहारा नहीं लिया जाना चाहिए, जब दाखिल करने के लिए वैधानिक अवधि

आरोप पत्र या चालान की अवधि समाप्त हो जाती है और अदालत में आरोप पत्र या चालान जमा किया जाता है। 30.दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 167 पर इस न्यायालय का एक और फैसला

गौर किया जाए अर्थात्, अचपाल उर्फ रामस्वरूप और एक अन्य बनाम। राजस्थान राज्य, (2019) 14 एस. सी. सी. 599 में सूचित किया गया। उदय मोहनलाल आचार्य (ऊपर) और राकेश कुमार पॉल (ऊपर) में इस न्यायालय के फैसलों सहित इस न्यायालय के कई पहले के फैसलों का उल्लेख करने के बाद, इस न्यायालय ने निर्धारित किया था कि दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान सशक्त नहीं हैं। जिस अवधि के भीतर जाँच पूरी की जानी चाहिए, उसे बढ़ाने के लिए कोई भी। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि कोई भी न्यायालय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी अवधि नहीं बढ़ा सकता है। अचपाल (ऊपर) के पैरा 20 में इस न्यायालय की टिप्पणियाँ निम्नलिखित हैं:

" 20. अब हम सहायक मुद्दे की ओर रुख करते हैं, अर्थात्, क्या उच्च न्यायालय अवधि बढ़ा सकता था। संहिता के प्रावधान किसी को भी उस अवधि को बढ़ाने का अधिकार नहीं देते हैं जिसके भीतर जाँच पूरी की जानी चाहिए और न ही यह ऐसी किसी घटना को स्वीकार करता है। आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1985 और महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 1999 जैसे अधिनियम हैं जो स्पष्ट रूप से अवधि के विस्तार पर विचार करते हैं और उस हद तक उन अधिनियमों ने धारा 167 सहित संहिता के प्रावधानों को संशोधित किया है। न्यायालय को अवधि बढ़ाने का अधिकार देने वाले ऐसे किसी भी समान प्रावधान के अभाव में, कोई भी न्यायालय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी अवधि नहीं बढ़ा सकता था।

जजबीर सिंह @जैसबिर सिंह सामरा @जैसबिर

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

मामले की किसी भी स्थिति में वह सब जो उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 3-7-2018 [महावीर बनाम। राजस्थान राज्य,

2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन राज 1] यह निवेदन था कि

राजपत्रित पुलिस अधिकारी द्वारा दो महीने के भीतर जांच पूरी की जाएगी। आदेश से यह संकेत नहीं मिलता है कि

उच्च न्यायालय के संज्ञान में लाया गया कि जांच पूरी करने की अवधि समाप्त हो रही है। लोक अभियोजक के प्रस्तुत करने की केवल रिकॉर्डिंग को विस्तार देने वाले आदेश के रूप में नहीं लिया जा सकता था। इस प्रकार हम विद्वान वकील द्वारा उस ओर से प्रस्तुत प्रस्तुतियों को अस्वीकार करते हैं।

राज्य और शिकायतकर्ता के लिए "।

31. सी. आर. पी. सी. की योजना जैसा कि ऊपर देखा गया है, स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि सी. आर. पी. सी. की धारा 167 के प्रावधानों में

व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता। आरोप पत्र प्रस्तुत किए बिना

60 जिस दिन या 90 दिन लागू हों, किसी आरोपी को पुलिस द्वारा हिरासत में नहीं लिया जा सकता है। यह प्रावधान व्यक्तिगत स्वतंत्रता को उचित मान्यता देता है। हालाँकि, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा दिनेश डालमिया बनाम में समझाया गया है। सी. बी. आई. ने (2007) 8 एस. सी. सी. 770 में सूचित किया कि डिफ़ॉल्ट जमानत का ऐसा अधिकार हालाँकि एक मूल्यवान अधिकार है, फिर भी यह एक सशर्त अधिकार है, पूर्ववर्ती स्थिति जांच के लंबित होने की है। इसलिए, एक बार जब पुलिस रिपोर्ट दाखिल करने के साथ जांच पूरी हो जाती है, जिसमें सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के तहत निर्दिष्ट विवरण होते हैं, तो डिफ़ॉल्ट जमानत के लिए दावे या अनुदान का सवाल नहीं उठता है।

32. हालाँकि, यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी एक विशेष प्रावधान के रूप में काम करती है।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) (ए) के तहत दिए गए अधिकारों की प्रयोज्यता के संबंध में प्रावधान। धारा 43 डी को नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

“ 43 डी. के कुछ प्रावधानों का संशोधित अनुप्रयोग

कोड। — (1) संहिता या किसी अन्य कानून में कुछ भी निहित होने के बावजूद, इस अधिनियम के तहत दंडनीय प्रत्येक अपराध संहिता की धारा 2 के खंड (ग) के अर्थ के भीतर एक संज्ञेय अपराध माना जाएगा और उस खंड में परिभाषित "संज्ञेय मामले" का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा।

(2) संहिता की धारा 167 इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध से जुड़े मामले के संबंध में लागू होगी।

उप-धारा (2) में संशोधन -

(क) "पंद्रह दिन", "नब्बे दिन" और "साठ दिन" के संदर्भ, जहाँ कहीं भी हों, उन्हें संदर्भ [2023] 6 एस. सी. आर. के रूप में माना जाएगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

" बशर्ते कि यदि नब्बे दिनों की उक्त अवधि के भीतर जांच पूरी करना संभव नहीं है, तो न्यायालय लोक अभियोजक की रिपोर्ट से संतुष्ट हो सकता है। जाँच की प्रगति का संकेत और विशिष्ट

अभियुक्त के हिरासत में लिए जाने के कारण उक्त से परे

नब्बे दिनों की अवधि, उक्त अवधि को एक सौ अस्सी दिनों तक बढ़ाएँ:

बशर्ते कि यदि जाँच करने वाला पुलिस अधिकारी

इस अधिनियम के तहत, न्यायिक हिरासत में किसी भी व्यक्ति की न्यायिक हिरासत से पुलिस हिरासत के लिए जांच के उद्देश्यों के लिए अनुरोध, वह ऐसा करने के कारणों को बताते हुए एक हलफनामा दायर करेगा और ऐसी पुलिस हिरासत का अनुरोध करने में देरी, यदि कोई हो, के बारे में भी बताएगा।

(3) संहिता की धारा 268 इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध से जुड़े मामले के संबंध में इस संशोधन के अधीन लागू होगी कि

(क) उसकी उप-धारा (1) में निर्देश

((i) "राज्य सरकार" को "केंद्र सरकार या राज्य सरकार" के संदर्भ के रूप में समझा जाएगा। ;

((ii) "राज्य सरकार के आदेश" को "केंद्र सरकार या राज्य के आदेश" के संदर्भ के रूप में माना जाएगा।

सरकार, जैसा भी मामला हो "; और

(ख) उसकी उप-धारा (2) में "राज्य सरकार" को दिए गए निर्देश का अर्थ "यथास्थिति, केंद्र सरकार या राज्य सरकार" के संदर्भ के रूप में किया जाएगा। (4) संहिता की धारा 438 में कुछ भी अभियुक्त किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी से जुड़े किसी भी मामले के संबंध में लागू नहीं होगा।

इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध किया हो।

(5) संहिता में कुछ भी निहित होने के बावजूद, कोई भी व्यक्ति अध्याय IV और VI के तहत दंडनीय अपराध का आरोपी नहीं है।

इस अधिनियम के तहत, यदि हिरासत में है, तो उसे जमानत पर या उसके न्यायाधीश सिंह @जैस्विर सिंह समरा @जैस्विर पर रिहा किया जाएगा।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

जब तक लोक अभियोजक को एक बांड नहीं दिया गया है इस तरह की रिहाई के लिए आवेदन पर सुनवाई का अवसर:

बशर्ते कि ऐसे अभियुक्त व्यक्ति को रिहा नहीं किया जाएगा

जमानत या अपने स्वयं के मुचलके पर यदि न्यायालय, केस डायरी या संहिता की धारा 173 के तहत की गई रिपोर्ट के अवलोकन पर यह राय रखता है कि यह विश्वास करने के लिए उचित आधार हैं कि ऐसे व्यक्ति के खिलाफ आरोप प्रथम दृष्टया सच है।

(6) उप-धारा (5) में निर्दिष्ट जमानत देने पर प्रतिबंध संहिता या जमानत देने पर तत्काल लागू किसी अन्य कानून के तहत प्रतिबंधों के अतिरिक्त है।
(7) उप में कुछ भी निहित होने के बावजूद

धारा (5) और (6), इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध के आरोपी व्यक्ति को कोई जमानत नहीं दी जाएगी, यदि वह भारतीय नागरिक नहीं है और बहुत ही असाधारण परिस्थितियों और लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों को छोड़कर अनधिकृत रूप से या अवैध रूप से देश में प्रवेश किया है।

33. इस प्रकार, यू. ए. पी. ए. के उपर्युक्त प्रावधान के एक स्पष्ट अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि डिफॉल्ट जमानत का लाभ उन्हें उपलब्ध होगा।

यू. ए. पी. ए. के तहत किए गए कथित अपराधों के लिए अभियुक्त जहां अभियुक्त की गिरफ्तारी के 90 दिनों के भीतर जांच समाप्त नहीं हुई है, उसके द्वारा किए गए कथित अपराधों की सजा के बावजूद। साथ ही, यह प्रावधान जांच एजेंसी को जांच की प्रगति का संकेत देते हुए लोक अभियोजक को एक रिपोर्ट दाखिल करके जांच पूरी करने के लिए 90 दिनों की और अवधि की मांग करने का अधिकार भी देता है। इस प्रकार, धारा 43 डी के आधार पर

यू. ए. पी. ए. के अनुसार, जाँच एजेंसी को जाँच पूरी करने के लिए $90 + 90$ दिन = 180 दिन मिलते हैं।

34. अब हम यू. ए. पी. ए. की धारा 45 पर गौर करेंगे। यू. ए. पी. ए. की धारा 45 अपराधों के संज्ञान के संबंध में है। की धारा 45

यू. ए. पी. ए. इस प्रकार है:

" 45. अपराधों का संज्ञान।

(1) कोई भी अदालत किसी भी अपराध का संज्ञान नहीं लेगी।

(i) अध्याय III के तहत केंद्र सरकार या इस संबंध में केंद्र सरकार द्वारा अधिकृत किसी भी अधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना; [2023] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

((ii) अध्याय IV और VI के तहत केंद्र सरकार या, जैसा भी मामला हो, राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना और यदि ऐसा अपराध पूर्व मंजूरी के बिना किसी विदेशी देश की सरकार के खिलाफ किया जाता है।

केंद्र सरकार की।

(2) उप-धारा (1) के तहत अभियोजन के लिए मंजूरी ऐसे समय के भीतर दी जाएगी जो उसके बाद ही निर्धारित की जाए।

केंद्र सरकार या, यथास्थिति, राज्य सरकार द्वारा नियुक्त ऐसे प्राधिकारी की रिपोर्ट पर विचार करते हुए, जो जांच के दौरान एकत्र किए गए साक्ष्य की स्वतंत्र समीक्षा करेगी और ऐसे समय के भीतर, जो निर्धारित किया जाए, केंद्र सरकार या, जैसा भी मामला हो, राज्य को एक सिफारिश करेगी।

सरकार "।

35. ऊपर निर्दिष्ट यू. ए. पी. ए. की धारा 45 पर बारीकी से नज़र डालने से पता चलता है कि उप-धारा (1) उस प्राधिकरण से संबंधित है जो यू. ए. पी. ए. के तहत किए गए अपराध के लिए मंजूरी दे सकता है, जबकि उप-धारा (2) प्राधिकरण द्वारा मंजूरी देने के समय अपनाई जाने वाली प्रक्रिया से संबंधित है। यू. ए. पी. ए. की धारा 45 (1) से यह स्पष्ट है कि यदि अपराध यू. ए. पी. ए. के अध्याय 3 के तहत आता है, तो

न्यायालय अपराध का संज्ञान तब तक नहीं लेगा जब तक कि केंद्र सरकार या केंद्र सरकार द्वारा इस संबंध में अधिकृत किसी अन्य अधिकारी द्वारा पूर्व मंजूरी नहीं दी जाती है। यदि कथित अपराध किया गया है जो अध्याय IV और VI के जवाब के तहत आता है, तो न्यायालय अपराध का संज्ञान तब तक नहीं लेगा जब तक कि केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा पूर्व मंजूरी नहीं दी जाती है। हालाँकि, यदि कथित रूप से किया गया अपराध किसी विदेशी देश की सरकार के खिलाफ है, तो न्यायालय केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना संज्ञान नहीं लेगा। यहाँ यह उल्लेख करना उचित है कि उत्तर में अध्याय IV और VI के तहत गिने गए अपराध के लिए, केवल केंद्र या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो,

मंजूरी देने के लिए अधिकृत हैं।

36. हमें 2008 के नियमों के क्रमशः नियम 3 और 4 के साथ ऊपर निर्दिष्ट यू. ए. पी. ए. की धारा 45 को पढ़ना चाहिए। हम नियम 3 और 4 को क्रमशः नीचे उद्धृत करते हैं:

" 3. प्राधिकरण द्वारा सिफारिश करने के लिए समय सीमा। - प्राधिकरण जजबीर सिंह @जे. एस. बी. आर. सिंह सामरा @जे. एस. बी. आर. की उप-धारा (2) के तहत कार्य करेगा।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

अधिनियम की धारा 45, अपनी रिपोर्ट बनाए जिसमें -

जाँच अधिकारी द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य की प्राप्ति के सात कार्य दिवसों के भीतर केंद्र सरकार या, जैसा भी मामला हो, राज्य सरकार को सिफारिशें।

संहिता के तहत।

4. अभियोजन की मंजूरी के लिए समय सीमा-केंद्रीय

सरकार या, जैसा भी मामला हो, राज्य

सरकार, अधिनियम की धारा 45 की उप-धारा (2) के तहत, निम्नलिखित सिफारिशों की प्राप्ति के बाद सात कार्य दिवसों के भीतर अभियोजन के लिए मंजूरी के संबंध में निर्णय लेगी:

प्राधिकरण "।

37. ऊपर निर्दिष्ट नियम 2008 इंगित करेगा कि प्राधिकरण, यू. ए. पी. ए. की धारा 45 की उप धारा (2) के तहत इसकी रिपोर्ट जिसमें केंद्र सरकार की सिफारिशें शामिल हैं

(या, जैसा भी मामला हो, राज्य सरकार) दंड प्रक्रिया संहिता के तहत जांच अधिकारी द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य की प्राप्ति के 7 कार्य दिवसों के भीतर। केंद्र सरकार (या जैसा भी मामला हो, राज्य सरकार) यू. ए. पी. ए. की धारा 45 की उप धारा (2) के तहत प्राधिकरण की सिफारिशों की प्राप्ति के बाद 7 कार्य दिवसों के भीतर अभियोजन की मंजूरी के संबंध में निर्णय लेने के लिए बाध्य है।

38. उपरोक्त संदर्भ में, माननीय सदन के भाषण में अपीलार्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने हमारा ध्यान आकर्षित किया।

मंत्री ने राज्यसभा में मसौदा विधेयकों को पेश करते हुए और अपने भाषण में, माननीय गृह मंत्री ने स्पष्ट रूप से कहा:

" अंत में, महोदय, हमने एक बहुत ही हितकारी प्रावधान शामिल किया है। जहाँ तक हमारी जानकारी है-मुझे नहीं पता, मुझे कानून मंत्री या कानून सचिव द्वारा बाद में सही किया जा सकता है-यह पहली बार है जब हम इसे पेश कर रहे हैं। यू. ए. पी. ए. के तहत अभियोजन में, अब यह कार्यकारी सरकार है जो एक पुलिस अधिकारी के माध्यम से मामला दर्ज करती है। यह कार्यकारी सरकार है जो

एक जाँच एजेंसी, अर्थात् पुलिस विभाग के माध्यम से मामले की जाँच करता है। यह कार्यकारी सरकार है। कौन सा प्रतिबंध यू / एस. 45. इसलिए, एक डर है कि एक प्रतिशोधी या गलत कार्यकारी सरकार। मामला दर्ज कर सकते हैं, जांच कर सकते हैं और अभियोजन को मंजूरी दे सकते हैं। एक भय है। हो सकता है, यह कोई डर नहीं है

पूरी तरह से उचित लेकिन आप यह नहीं कह सकते कि यह पूरी तरह से उचित है। अनुचित। तो हम क्या कर रहे हैं? कार्यकारी सरकार।

एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

मामला दर्ज करें क्योंकि कोई और मामला दर्ज नहीं कर सकता है। द.

कार्यकारी सरकार।, अपनी एजेंसी के माध्यम से, जांच कर सकते हैं

मामला। लेकिन, 45 (1) के तहत मंजूरी दिए जाने से पहले हम

एक स्वतंत्र प्राधिकरण को हस्तक्षेप करना जो समीक्षा करेगा

पूरा सबूत, जाँच में एकत्र किया गया, और फिर

प्राधिकरण जिसे एकत्र किए गए पूरे साक्ष्य की समीक्षा करनी होती है
एक सिफारिश करें। या फिर

और फिर, राज्य सरकार को

मनमानी जिसके बारे में कई सदस्यों ने बात की। साहब, ये विधेयक की विशेषताएँ हैं "।

(जोर दिया गया)

39. अब हम एन. आई. ए. के प्रावधानों को देखने के लिए आगे बढ़ेंगे।

एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 की प्रक्रिया और शक्तियों से संबंधित है

सभी अदालतों। धारा 16 की उप-धारा (1) हमारे उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है।

वही इस प्रकार पढ़ता है:

" 16. विशेष न्यायालयों की प्रक्रिया और शक्तियाँ।

(1) एक विशेष न्यायालय किसी भी अपराध का संज्ञान ले सकता है,
लिए प्रतिबद्ध किए बिना,

अभियुक्त के मुकदमे के

तथ्यों की शिकायत प्राप्त करना जो इस तरह के अपराध का गठन करते हैं या
रिपोर्ट पर। "

ऐसे तथ्यों की पुलिस

9

40. एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 18 अभियोजन की मंजूरी से संबंधित है।

18 इस प्रकार पढ़ता है:

" 18. अभियोजन के लिए मंजूरी।

कोई अभियोजन, मुकदमा या अन्य कानूनी कार्यवाही नहीं की जाएगी।

पूर्व अनुमोदन को छोड़कर किसी भी न्यायालय में स्थापित
सदस्य के खिलाफ

केंद्र सरकार का, एजेंसी के किसी भी

या किसी भी चीज़ के संबंध में उसकी ओर से कार्य करने वाला कोई व्यक्ति

इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त "।

41. एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 की शक्ति के संबंध में है
सरकार सत्र न्यायालय को विशेष न्यायालय के रूप में नामित करेगी।

एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 इस प्रकार है:

जजबीर सिंह @जे. एस. बी. आर. सिंह समरा @JASBIR राष्ट्रीय जांच एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

" 22. सत्र न्यायालय को विशेष न्यायालय के रूप में नामित करने की राज्य सरकार की शक्ति। - (1) राज्य सरकार में निर्दिष्ट किसी भी या सभी अधिनियमों के तहत अपराधों के मुकदमे के लिए एक या अधिक सत्र न्यायालयों को विशेष न्यायालयों के रूप में नामित कर सकती है।

अनुसूची.

(2) इस अध्याय के प्रावधान उप-धारा (1) के तहत राज्य सरकार द्वारा नामित विशेष न्यायालयों पर लागू होंगे और निम्नलिखित संशोधनों के अधीन प्रभावी होंगे, अर्थात्-(i) धाराओं में "केंद्र सरकार" के संदर्भ।

11 और 15 को राज्य के संदर्भ के रूप में समझा जाएगा।

सरकार;

((ii) धारा 13 की उप-धारा (1) में "एजेंसी" के संदर्भ का अर्थ "जांच एजेंसी" के संदर्भ के रूप में किया जाएगा।

राज्य सरकार का ";

((iii) उप-धारा में "भारत के लिए महान्यायवादी" का संदर्भ (3) धारा 13 का अर्थ "अधिवक्ता" के संदर्भ में लगाया जाएगा।

राज्य के जनरल "।

(3) इस अधिनियम द्वारा किसी विशेष न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता

जब तक राज्य द्वारा विशेष न्यायालय नामित नहीं किया जाता है

किसी भी अपराध के मामले में उप-धारा (1) के तहत सरकार

इस अधिनियम के तहत दंडनीय, कुछ भी होने के बावजूद

संहिता में निहित, उस प्रभाग के सत्र न्यायालय द्वारा प्रयोग किया जाएगा जिसमें ऐसा अपराध किया गया है और इसके पास इस अध्याय के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया का पालन करने के लिए सभी शक्तियां होंगी।

(4) जिस तारीख से राज्य सरकार द्वारा विशेष न्यायालय नामित किया जाता है, उस तारीख से इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत राज्य सरकार द्वारा जांच किए गए किसी भी अपराध का मुकदमा विशेष न्यायालय के समक्ष आयोजित किया जाना आवश्यक होता है।

न्यायालय, उस तारीख को उस न्यायालय में स्थानांतरित हो जाएगा

जिसे नामित किया गया है "।

42. अब हम 1908 के अधिनियम पर गौर करेंगे। 1908 की धारा 7 में जिला मजिस्ट्रेट की सहमति को छोड़कर 1908 के अधिनियम के तहत अपराधों के मुकदमे पर प्रतिबंध लगाया गया है। धारा 7 इस प्रकार है:

" 7. अपराधों के मुकदमे पर प्रतिबंध।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कोई भी अदालत किसी अपराध के लिए किसी व्यक्ति पर मुकदमा नहीं चलाएगी।

जिले की सहमति के अलावा इस अधिनियम के खिलाफ

मजिस्ट्रेट "।

अंतिम विश्लेषण

मुद्दा संख्या 1

43. हम अपीलार्थियों की ओर से प्रचार किए गए मुख्य तर्क में कोई योग्यता नहीं पाते हैं कि मंजूरी के बिना दायर किया गया आरोप पत्र अपूर्ण आरोप पत्र जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप धारा (5) के अनुरूप नहीं कहा जा सकता है। अपीलार्थियों की ओर से पेश विद्वान वकील ने यह स्वीकार किया कि आरोप पत्र कानूनी समय अवधि यानी 180 दिनों के भीतर दायर किया गया था, हालांकि, संबंधित अदालत इस तरह के आरोप पत्र का संज्ञान नहीं ले सकती थी क्योंकि मंजूरी के आदेश इस तरह का हिस्सा नहीं थे।

आरोप पत्र। कानून के तहत मंजूरी की आवश्यकता है या नहीं, यह एक ऐसा सवाल है जिस पर अपराध का संज्ञान लेते समय विचार किया जाना चाहिए, न कि जांच या जांच के दौरान। जाँच और अभियोजन के चरण में एक स्पष्ट अंतर है। अभियोजन तब शुरू होता है जब अपराध का संज्ञान लिया जाता है। यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अपराध का संज्ञान लिया जाता है न कि अपराधी का। यह नहीं कहा जा सकता है कि सक्षम अधिकारियों या संबंधित अधिकारियों से मंजूरी प्राप्त करना जांच का हिस्सा है। मंजूरी की आवश्यकता केवल अदालत को अपराध का संज्ञान लेने में सक्षम बनाने के लिए है। अदालत के समक्ष मंजूरी आदेश पेश किए जाने के बाद अदालत अपराध का संज्ञान ले सकती है, लेकिन जिस क्षण, अभियोजन पक्ष द्वारा जिन दस्तावेजों पर भरोसा किया जा सकता है, उनके साथ अंतिम रिपोर्ट दायर की जाती है, तो जांच पूरी हो गई मानी जाएगी। पूरी तरह से संज्ञान लेना है

जाँच को पूरा करने से अलग। जाँच को पूरा करना और अंतिम रिपोर्ट दाखिल करना जाँच एजेंसी का कर्तव्य है, लेकिन

अपराध का संज्ञान न्यायालय की शक्ति है। किसी मामले में न्यायालय किसी विशेष अवधि के लिए अपराध का संज्ञान नहीं ले सकता है -

अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के बाद भी। ऐसी परिस्थिति में, संबंधित अभियुक्त डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत अपने अक्षम्य अधिकार का दावा नहीं कर सकते हैं। सी. आर. पी. सी. की धारा 167 (2) के तहत जो विचार किया गया है वह यह है कि मजिस्ट्रेट या नामित अदालत (जैसा भी मामला हो) के पास आरोपी को हिरासत में लेने का आदेश देने की कोई शक्ति नहीं है।

180 दिनों या 90 दिनों या 60 दिनों की अवधि से परे, जैसा भी मामला हो। यदि जांच निर्धारित अवधि के भीतर पूरी हो जाती है, तो संबंधित अभियुक्त को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधान के तहत जमानत पर रिहा होने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

44. एक बार उन सभी दस्तावेजों के साथ अंतिम रिपोर्ट दाखिल हो जाने के बाद, जिन पर अभियोजन पक्ष भरोसा करने का प्रस्ताव करता है, जांच पूरी हो गई मानी जाएगी। जाँच पूरी करने और न्यायालय को एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद, जाँच अधिकारी एकत्रित साक्ष्य और अन्य सामग्रियों के साथ अंतिम रिपोर्ट की एक प्रति मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को भेज सकता है ताकि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी मंजूरी देने के लिए अपना दिमाग लगा सके। मंजूरी के अनुसार मंजूरी देने वाले प्राधिकरण का कर्तव्य है जो जांच से बिल्कुल भी जुड़ा नहीं है। यदि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को मंजूरी देने में कुछ समय लगता है, तो यह अदालत के समक्ष जांच एजेंसी द्वारा दायर अंतिम रिपोर्ट को दूषित नहीं करता है। सी. आर. पी. सी. की धारा 173 मंजूरी आदेश के बारे में बिल्कुल नहीं बताती है। सी. आर. पी. सी. की धारा 167 भी केवल जाँच के बारे में बताती है न कि मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान के बारे में। इसलिए, एक बार अंतिम रिपोर्ट दाखिल हो जाने के बाद, यह जांच पूरी होने का प्रमाण है और यदि अंतिम रिपोर्ट संबंधित आरोपी की रिमांड की प्रारंभिक तिथि से 180 दिनों या 90 दिनों या 60 दिनों की अवधि के भीतर दायर की जाती है, तो वह यह दावा नहीं कर सकता है कि मंजूरी आदेश दाखिल करने के अभाव में उसे जमानत पर रिहा होने का अधिकार प्राप्त हो गया है।

45. सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (5), निश्चित रूप से, उन सभी दस्तावेजों या उनके प्रासंगिक उद्धरणों की आवश्यकता है जिन पर अभियोजन पक्ष

अंतिम रिपोर्ट के साथ भरोसा करने का प्रस्ताव है। प्रतिबंध आदेश नहीं हो सकता है दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के खंड (5) के तहत अनुध्यात दस्तावेजों की श्रेणी में लाया जाएगा। मंजूरी का अनुदान पूरी तरह से

यू. ए. पी. ए. की धारा 45 के तहत संबंधित सरकार द्वारा किया जाने वाला एक अलग कार्य।

46. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के मामले में V. आर. एस. पाई और एक अन्य ने (2002) 5 एस. सी. सी. 82 में प्रतिवेदन दिया, इस न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया गया कि "यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि अतिरिक्त दस्तावेज नहीं हो सकते हैं।

बाद में उत्पादित। यदि रिपोर्ट जमा करते समय प्रासंगिक दस्तावेज प्रस्तुत नहीं करने में कोई गलती हुई है या

आरोप पत्र, जांच अधिकारी के लिए अदालत की अनुमति से इसे पेश करने के लिए हमेशा खुला रहता है। यह भी कहा गया कि उप-धारा (5) में प्रयुक्त "... शब्द" की व्याख्या अनिवार्य के रूप में नहीं की जा सकती है, बल्कि निर्देशिका के रूप में की जा सकती है। आम तौर पर, दस्तावेज़ जाँच के दौरान एकत्र किए गए जिन पर अभियोजन पक्ष भरोसा करना चाहता है, उन्हें मजिस्ट्रेट के पास भेजा जाना आवश्यक है, लेकिन यदि कुछ चूक है, तो इसका मतलब यह नहीं होगा कि शेष दस्तावेजों को बाद में पेश नहीं किया जा सकता है। [2023] 6 एस. सी. आर. के तहत समान प्रावधान।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 173 (4) थी

नारायण राव बनाम में इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया। एपी का राज्य [ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 737: 1958 एससीआर 283: 1957 सी. आर. आई. एल. जे. 1320] (एस. सी. आर. पी. 293) और यह अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 173 की उप-धारा (4) और धारा 207-ए की उप-धारा (3) में आने वाला शब्द "होगा" अनिवार्य नहीं है, लेकिन केवल

निर्देशिका. इसके अलावा, धारा 173 की उप-धारा (8) की योजना यह भी स्पष्ट करती है कि आरोप पत्र के बाद भी

प्रस्तुत, आगे की जांच, यदि आवश्यक हो, तो वर्जित नहीं है। यदि आगे की जांच बाधित नहीं है तो अभियोजन पक्ष को अतिरिक्त दस्तावेज पेश करने की अनुमति नहीं देने का कोई सवाल ही नहीं है।

47. उपरोक्त से, यह स्पष्ट है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित मंजूरी के आदेश को आरोप पत्र दाखिल करने के बाद भी प्रस्तुत किया जा सकता है और रिकॉर्ड पर रखा जा सकता है। ऐसा हो सकता है कि विशेष न्यायालय के समक्ष मंजूरी का आदेश देने में अत्यधिक देरी से मुकदमे में देरी हो सकती है क्योंकि सक्षम न्यायालय रिकॉर्ड पर वैध मंजूरी के बिना अपराध का संज्ञान नहीं ले पाएगा। ऐसी स्थिति में, अधिक से अधिक, अभियुक्त के लिए यह तर्क देना खुला हो सकता है कि त्वरित सुनवाई के उसके अधिकार का उल्लंघन किया गया है जिससे संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होता है। यह अभियुक्त को मुकदमे में देरी के आधार पर नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करने का अधिकार दे सकता है। लेकिन यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधानों के तहत वैधानिक/चूक जमानत के लिए प्रार्थना करने का आधार नहीं हो सकता है।

48. आरोप पत्र और कुछ नहीं बल्कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के तहत पुलिस अधिकारी की अंतिम रिपोर्ट है। सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) में प्रावधान है कि जाँच पूरी होने पर जाँच करने वाला पुलिस अधिकारी

मामला; (घ) क्या कोई अपराध किया गया प्रतीत होता है और, यदि हां, जिसके द्वारा (ङ) अभियुक्त को गिरफ्तार किया गया है या नहीं; (च) क्या उसे उसके मुचलके पर रिहा किया गया था और, यदि हां, तो जमानत के साथ या उसके बिना; और (छ) क्या उसे धारा 170 के तहत हिरासत में भेज दिया गया है। जैसा कि इस न्यायालय ने सत्य नारायण मुसादी और अन्य बनाम में कहा है। बिहार राज्य ने (1980) 3 एस. सी. सी. 152 में 157 पर बताया कि वैधानिक सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के तहत रिपोर्ट की आवश्यकता जजवीर सिंह @जैसबिर सिंह समरा @जैसबिर होगी।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

आवश्यक जानकारी अदालत को भेजी जा रही है। वास्तव में, सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के तहत रिपोर्ट का उद्देश्य एक राय होना है जाँच अधिकारी कि जहाँ तक उसका संबंध है, वह अदालत द्वारा अभियुक्त के मुकदमे के लिए पर्याप्त सामग्री प्राप्त करने में सक्षम रहा है। रिपोर्ट पूरी हो जाती है यदि यह सभी दस्तावेजों के साथ हो और

सी. आर. पी. सी. की धारा 175 (5) के अनुसार गवाहों के बयान। जाँच अधिकारी की रिपोर्ट में और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। यह भी आवश्यक नहीं है कि अपराध के सभी विवरण बताए जाने चाहिए। अपराध के विवरण को बाद के चरण में अभियुक्त के सामने अपराध को घर लाने के लिए साबित किया जाना आवश्यक है, यानी स्वीकार्य साक्ष्य पेश करके मामले की सुनवाई के दौरान। (के. वीरास्वामी बनाम देखें। भारत संघ और अन्य, (1991) 3 एस. सी. 655.) 49. 180 दिनों की अधिकतम अवधि जो जांच एजेंसी को मामले में जांच पूरी करने के लिए दी जा रही है।

यू. ए. पी. ए. के तहत अपराध के लिए अभियोजन एक पैकेज के रूप में कुछ नहीं है जिसे 180 दिनों की इस अवधि के भीतर मंजूरी प्राप्त करने सहित सब कुछ पूरा किया जाना है। जैसा कि ऊपर देखा गया है, जांच एजेंसी का मंजूरी से कोई लेना-देना नहीं है। मंजूरी है

पूरी तरह से एक अलग प्रक्रिया। जांच एजेंसी द्वारा एकत्र की गई सामग्री के आधार पर मंजूरी दी जाती है, जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत अंतिम रिपोर्ट का हिस्सा है। जाँच एजेंसी

जाँच पूरी करने के लिए पूरे 180 दिन मिलते हैं। यह कहना कि मंजूरी प्राप्त करना और उसे आरोप पत्र के साथ रखना चाहिए

180 दिनों की अवधि के भीतर किया जाना कुछ ऐसा है जो न केवल ऊपर चर्चा किए गए कानून के प्रावधानों के विपरीत है, बल्कि अकल्पनीय है।

50. आइए हम नियम 2008 को ध्यान में रखते हुए उपरोक्त तर्क का परीक्षण करें। नियम 2008 का नियम 3 यह बहुत स्पष्ट करता है कि प्राधिकरण

संबंधित यू. ए. पी. ए. की धारा 45 की उप धारा (2) के तहत अपनी रिपोर्ट देगा, जिसमें राज्य सरकार से केंद्र सरकार को सिफारिशें शामिल हैं, क्योंकि मामला सी. आर. पी. सी. के तहत जांच अधिकारी द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य की प्राप्ति के 7 कार्य दिवसों के भीतर हो सकता है। हम "सी. आर. पी. सी. के तहत जांच अधिकारी द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य की प्राप्ति के 7 कार्य दिवसों के भीतर" अभिव्यक्ति पर जोर देते हैं। यह सबूत जो नियम 2008 के नियम 3 में [2023] 6 एस. सी. आर. पर विचार करता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

सी. आर. पी. सी. की धारा 173 के तहत जांच एजेंसी द्वारा दायर अंतिम रिपोर्ट है। धारा 45 की उप-धारा (2) के तहत प्राधिकरण से यह उम्मीद कैसे की जा सकती है कि वह जांच अधिकारी द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य को पूरी तरह से शामिल करते हुए आरोप-पत्र को देखे बिना सिफारिशों वाली अपनी रिपोर्ट बनाए। इसके विपरीत, नियम 2008 का नियम 3 स्पष्ट रूप से यह स्पष्ट करता है कि यू. ए. पी. ए. की धारा 45 की उप-धारा (2) के तहत प्राधिकरण कानून में अपने दिमाग को पूरी तरह से लागू करने के लिए बाध्य है। जाँच अधिकारी द्वारा साक्ष्य एकत्र किया जाता है और उसके बाद, मंजूरी देने के लिए केंद्र सरकार या राज्य सरकार को सिफारिशों वाली अपनी रिपोर्ट तैयार करता है। मंजूरी देना कोई बेकार की औपचारिकता नहीं है। मंजूरी का अनुदान उचित होना चाहिए।

मन का अनुप्रयोग।

51. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम में यह न्यायालय। अशोक कुमार अग्रवाल ने (2014) 14 एस. सी. सी. 295 में निम्नलिखित मंजूरी की वैधता पर विचार-विमर्श करते हुए रिपोर्ट दी:

" 13. अभियोजन पक्ष को अदालत को संतुष्ट करना होगा कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा मंजूरी देने के लिए मामले को भेजने के समय, इस तरह के अनुदान के लिए पर्याप्त सामग्री बनाई गई थी

उक्त प्राधिकारी को उपलब्ध। यह मंजूरी आदेश से भी स्पष्ट हो सकता है, यदि यह अत्यंत व्यापक है, क्योंकि मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों को मंजूरी आदेश में स्पष्ट किया जा सकता है। हालाँकि, प्रत्येक व्यक्तिगत मामले में, अदालत को यह पता लगाना होता है कि क्या उसके सामने रखी गई सामग्री पर संबंधित मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की ओर से कोई विचार-विमर्श किया गया है। यह इस कारण से इतना आवश्यक है कि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी पर मामले के भौतिक तथ्यों की पूरी जानकारी होने के बाद ही मंजूरी देने या रोकने के अपने कर्तव्य का निर्वहन करने का दायित्व है। मंजूरी देना केवल औपचारिकता नहीं है। इसलिए, मंजूरी के संबंध में प्रावधानों का सार्वजनिक हित और सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए पूरी सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

अभियुक्त के लिए उपलब्ध है जिसके खिलाफ मंजूरी है

हूँदते हैं। "

52. अशोक कुमार अग्रवाल (ऊपर) में पैरा 16 में कानूनी प्रस्तावों का सारांश देते हुए, इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में टिप्पणी की:

" 16.1 . अभियोजन पक्ष को एफ. आई. आर., प्रकटीकरण जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर सहित मंजूरी देने वाले प्राधिकरण को पूरा प्रासंगिक रिकॉर्ड भेजना चाहिए।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

बयान, गवाहों के बयान, वसूली ज्ञापन, आरोप पत्र का मसौदा और अन्य सभी प्रासंगिक सामग्री। इस प्रकार भेजे गए अभिलेख में वह सामग्री/दस्तावेज, यदि कोई हो, भी होना चाहिए, जो अभियुक्त के पक्ष में और उसके आधार पर शेष राशि को झुका सकता है।

जिनमें से, सक्षम प्राधिकारी मंजूरी देने से इनकार कर सकता है।

मंजूरी देने या रोकने के अपने कर्तव्य का निर्वहन करना।

16.3 . मंजूरी देने की शक्ति का उपयोग जनहित और उस अभियुक्त के लिए उपलब्ध सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए किया जाना है जिसके खिलाफ मंजूरी मांगी गई है।

16.4 . मंजूरी के आदेश से यह स्पष्ट होना चाहिए कि प्राधिकरण सभी प्रासंगिक तथ्यों/सामग्रियों से अवगत था और

सभी प्रासंगिक सामग्री पर अपना दिमाग लगाया था।

16.5 . प्रत्येक व्यक्तिगत मामले में, अभियोजन पक्ष को स्थापित करना होता है

और प्रमुख साक्ष्य द्वारा न्यायालय को संतुष्ट करता है कि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रासंगिक तथ्य रखे गए थे और प्राधिकरण ने इस पर अपना दिमाग लगाया था और मंजूरी कानून के अनुसार दी गई थी।

53. इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि जांच एजेंसी द्वारा आरोप पत्र के रूप में एकत्र किए गए साक्ष्य पूरी तरह से सही हों।

इस पर गौर किया जाता है और उसके बाद सिफारिशें की जाती हैं। जाँच एजेंसी को जाँच पूरी करने के लिए पूरे 180 दिन का समय मिलता है और

सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (2) के अनुसार सक्षम अदालत के समक्ष अपनी रिपोर्ट दाखिल करें। यदि हम अपीलार्थियों की ओर से प्रचार किए गए तर्क को स्वीकार करते हैं, तो यह बात सामने आती है कि जांच एजेंसी को जांच की अवधि को इस तरह से समायोजित करना पड़ सकता है कि 180 दिनों की अवधि के भीतर मंजूरी भी प्राप्त हो जाए और अदालत के समक्ष रखी जाए। हम इस तर्क को पूरी तरह से अनुचित पाते हैं।

54. सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (उपरोक्त) के मामले में इस अदालत को इस सवाल पर विस्तार से विचार करने का अवसर मिला कि क्या अभियुक्त को डिफॉल्ट जमानत लेने से रोकने के लिए आरोप पत्र का संज्ञान आवश्यक था या क्या केवल आरोप पत्र दाखिल करना ही जांच को पूरा करने के लिए पर्याप्त होगा। [2023] 6 एस. सी. आर. में याचिकाकर्ता

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उक्त मामले को जलगांव शहर में झुग्गियों के विकास के लिए राशि के दुरुपयोग के आरोप में 11.03.2012 पर गिरफ्तार किया गया था। याचिकाकर्ता पर अपराध करने का आरोप लगाया गया था आई. पी. सी. की धारा 34 के साथ पठित धारा 120 बी, 409, 411, 406, 408, 465, 468, 471, 177 और 109 के तहत और धारा 13 (1) (सी) के तहत भी दंडनीय,

13 (1) (घ) और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2)। उसमें याचिकाकर्ता का तर्क था कि वह नहीं हो सकता था

90 दिनों की वैधानिक अवधि के भीतर मंजूरी के अभाव में संज्ञान नहीं लिए जाने के कारण हिरासत में भेज दिया गया। अभियुक्त के रिमांड से संबंधित प्रावधानों की योजना पहले जाँच के चरण के दौरान और उसके बाद, संज्ञान लेने के बाद, इंगित करती है कि विधायिका ने कुछ अपराधों की जाँच को उसमें निर्धारित अवधि के भीतर पूरा करने का इरादा किया था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जांच अधिकारियों द्वारा निर्धारित अवधि के भीतर जांच पूरी नहीं होने की स्थिति में, अभियुक्त को जमानत देने का एक अक्षम्य अधिकार प्राप्त हो जाता है, यदि वह जमानत देने की पेशकश करता है। इस अदालत का दृढ़ विचार था कि यदि 61 वें दिन या 91 वें दिन, कोई आरोपी आरोप पत्र दायर किए जाने की चूक में जमानत पर रिहा होने के लिए आवेदन करता है, तो अदालत के पास आरोपी को जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। हालांकि, एक बार निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर किए जाने के बाद, आरोपी का वैधानिक/चूक जमानत का अधिकार समाप्त हो गया और आरोपी गुण-दोष के आधार पर नियमित जमानत के लिए प्रार्थना करने का हकदार होगा। इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आरोप पत्र दाखिल करना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के परंतुक (ए) के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है और

न्यायालय अगले चरण में आगे बढ़ता है, जो संज्ञान लेना और मुकदमा चलाना है। जाँच की अवधि के दौरान, अभियुक्त मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में होता है, जिसके समक्ष उसे पहले पेश किया जाता है, ऐसे मजिस्ट्रेट के पास आरोपी को पुलिस अभिरक्षा और/या न्यायिक अभिरक्षा में भेजने की शक्ति होती है, जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत निर्धारित अधिकतम अवधि तक होती है। इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि एक आरोपी को किसी अदालत की हिरासत में रहना पड़ता है, इस अदालत ने निष्कर्ष निकाला कि निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर करने पर, अभियुक्त तब तक मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में रहता है जब तक कि अपराध की सुनवाई करने वाली अदालत द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है, जब उक्त अदालत दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 के संदर्भ में मुकदमे के दौरान अभिरक्षा के उद्देश्यों के लिए अभियुक्त की अभिरक्षा ग्रहण करती है। इस अदालत ने स्पष्ट किया कि दोनों चरण अलग-अलग हैं, एक के बाद एक, ताकि अदालत के साथ आरोपी की हिरासत की निरंतरता बनाए रखी जा सके।

जजबीर सिंह @जैस्वीर सिंह समरा @जैस्वीर राष्ट्रीय अन्वेषण एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

55. हम सुरेश कुमार के प्रासंगिक भागों का उल्लेख करते हैं।

अमचंद जैन (ऊपर) का फैसला इस प्रकार है:

“ 16. इस मोड़ पर हम कुछ तिथियों का उल्लेख कर सकते हैं जो हैं -

इस मामले के तथ्यों के लिए प्रासंगिक, अर्थात्: (a) 11-3-2012-याचिकाकर्ता को गिरफ्तार किया गया और रिमांड पर लिया गया

पुलिस हिरासत;

(ख) 25-4-2012-चारों के खिलाफ दायर पहला आरोप पत्र

अभियुक्त; (ग) 1-6-2012-पूरक आरोप-पत्र जिसमें दाखिल किया गया हो।

याचिकाकर्ता का नाम है; (घ) 30-7-2012-निचली अदालत ने याचिकाकर्ता की प्रार्थना को खारिज कर दिया

जमानत देने के लिए;

(ई) 13-9-2012 [सुरेश बनाम महाराष्ट्र राज्य, 2012 का आपराधिक आवेदन संख्या 3568, दिनांकित आदेश 13-9-2012 (बम) उच्च न्यायालय ने निचली अदालत के आदेश की पुष्टि की;

(+) 2-10-2012 — दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत दायर आवेदन

विचारण न्यायालय के समक्ष;

(छ) 5-10-2012-निचली अदालत ने आवेदन को खारिज कर दिया

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2)।

उपरोक्त तिथियों से, यह स्पष्ट हो जाएगा कि याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी और पुलिस हिरासत में रिमांड की तारीख से 90 दिनों के भीतर आरोप पत्र और पूरक आरोप पत्र दोनों दायर किए गए थे। यह सच है कि अभियोजन पक्ष की विफलता के कारण विशेष न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं लिया गया था

एक निर्धारित अवधि के भीतर विभिन्न प्रकार के मामलों के संबंध में जांच पूरी करना और जांच की विफलता पर जमानत पर रिहा होने का आरोपी का अधिकार है। ऐसा करने के लिए अधिकारी। एक अभियुक्त की रिमांड से संबंधित प्रावधानों की योजना, पहले जाँच के चरण के दौरान [2023] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

और, उसके बाद, संज्ञान लेने के बाद, यह इंगित करता है कि विधायिका का इरादा कुछ अपराधों की जांच करना था - 60 दिनों के भीतर पूरा किया गया और मृत्युदंड, आजीवन कारावास या कम की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय अपराध

10 साल से अधिक, 90 दिनों के भीतर। यदि जाँच अधिकारी द्वारा जाँच पूरी नहीं की जाती है, तो अभियुक्त को जमानत देने का अक्षम्य अधिकार प्राप्त हो जाता है, यदि वह जमानत देने की पेशकश करता है। तदनुसार, यदि 61 वें दिन या 91 वें दिन, कोई अभियुक्त आरोप पत्र दायर किए जाने की चूक में जमानत पर रिहा होने के लिए आवेदन करता है, तो अदालत के पास अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। उक्त प्रावधान पर विभिन्न मामलों में विचार और व्याख्या की गई है, जैसे कि पहले उल्लिखित मामले। नटवर परिदा मामले में दोनों निर्णय [(1975) 2 एस. सी. सी. 220: 1975 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 484] और संजय दत्त मामले में [(1994) 5 एस. सी. सी. 410: 1994 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1433] ऐसे उदाहरण थे जहाँ आरोप पत्र धारा 167 (2) सी. आर. पी. सी. में निर्धारित अवधि के भीतर दायर नहीं किया गया था और आरोप पत्र दाखिल करने से पहले जमानत देने के लिए एक आवेदन किया गया था, इस न्यायालय ने कहा कि

अभियुक्त को जमानत देने का अक्षम्य अधिकार था, यदि आरोप-पत्र दाखिल करने से पहले ऐसा आवेदन किया गया था, लेकिन एक बार आरोप-पत्र दायर होने के बाद, ऐसा अधिकार समाप्त हो गया और अभियुक्त नियमित रूप से जमानत के लिए प्रार्थना करने का हकदार होगा।

गुण-दोष पर जमानत। 18. उक्त मामलों में से कोई भी इस स्थिति से अलग नहीं है कि एक बार निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दायर करने के बाद, डिफॉल्ट जमानत या वैधानिक जमानत देने का सवाल ही नहीं उठता है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, हमारे विचार में, आरोप पत्र दाखिल करना धारा के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है।

167 (2) (क) (ख) इस मामले में। जहाँ तक सी. आर. पी. सी. की धारा 167 का संबंध है, संज्ञान लिया जाता है या नहीं, यह महत्वपूर्ण नहीं है। द.

जो अधिकार याचिकाकर्ता को अर्जित हुआ होगा, यदि आरोप पत्र दायर नहीं किया गया था, वह इस मामले के तथ्यों की ओर आकर्षित नहीं होता है। केवल इसलिए कि मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी प्राप्त नहीं की गई थी

अभियुक्त और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 के स्तर पर आगे बढ़ने के लिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त अनुदान का हकदार है।

वैधानिक जमानत, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 में परिकल्पित है। सी. आर. पी. सी. की योजना ऐसी है कि एक बार जाँच चरण पूरा हो जाने के बाद,

अदालत अगले चरण में आगे बढ़ती है, जो कि जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर को लेना है।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

संज्ञान और परीक्षण। अभियुक्त को हिरासत में रहना पड़ता है

कुछ अदालतें। जाँच के दौरान, अभियुक्त

मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा में है जिसके सामने वह

सबसे पहले उत्पादित किया जाता है। उस चरण के दौरान, धारा 167 (2) के तहत

सी. आर. पी. सी., मजिस्ट्रेट के पास रिमांड का अधिकार निहित है

पुलिस हिरासत और/या न्यायिक हिरासत दोनों के लिए अभियुक्त

हिरासत, एक बार में 15 दिनों के लिए, अधिकतम 60 की अवधि तक

10 वर्ष से कम के लिए दंडनीय अपराधों के मामलों में दिन और 90 दिन जहां अपराध 10 से अधिक के लिए दंडनीय हैं।

साल या यहाँ तक कि मौत की सजा। घटना में, एक जांच

प्राधिकरण निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दाखिल करने में विफल रहता है।

अवधि, अभियुक्त वैधानिक रूप से रिहा होने का हकदार है

जमानत। ऐसे में आरोपी अभी भी अंदर ही रहता है।

मजिस्ट्रेट की अभिरक्षा तब तक जब तक कि संज्ञान न लिया जाए

अपराध की सुनवाई करने वाली अदालत द्वारा लिया गया, जब उक्त अदालत

अलग, लेकिन एक दूसरे का अनुसरण करता है ताकि एक बनाए रखा जा सके न्यायालय के साथ अभियुक्त की अभिरक्षा की निरंतरता।

(जोर दिया गया)

56. सुरेश कुमार के मामले में इस अदालत के फैसले से यह स्पष्ट है

भीकमचंद जैन (ऊपर) ने कहा कि आरोप पत्र दाखिल करना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है और कोई आरोपी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत इस आधार पर डिफॉल्ट जमानत पर रिहाई की मांग नहीं कर सकता है कि वैधानिक समय अवधि की समाप्ति से पहले संज्ञान नहीं लिया गया है। अभियुक्त मजिस्ट्रेट की हिरासत में तब तक बना रहता है जब तक कि अपराध की सुनवाई करने वाली अदालत द्वारा संज्ञान नहीं लिया जाता है, जो संज्ञान लेने के बाद रिमांड के उद्देश्य से अभियुक्त की हिरासत मान लेती है।

57. इस न्यायालय का उपरोक्त निर्णय कानून की स्थिति बनाता है।

यह बहुत स्पष्ट है कि एक बार निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दायर किए जाने के बाद, वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत देने का सवाल ही नहीं उठता है। संज्ञान लिया गया है या नहीं, यह इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक नहीं है।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 का अनुपालन। केवल आरोप पत्र दाखिल करना ही पर्याप्त है।

58. सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (ऊपर) का निर्णय

गंभीर [2023] 6 एस. सी. आर. के मामले में इस न्यायालय द्वारा संदर्भित किया गया है और उस पर भरोसा किया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

धोखाधड़ी जांच कार्यालय (ऊपर)। उक्त निर्णय में, वही मुद्दा अदालत के विचार के लिए आया, क्या आरोपी इस आधार पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत का हकदार है कि रिमांड की तारीख से 60 दिन या 90 दिन की समाप्ति से पहले संज्ञान नहीं लिया गया था?

59. हालांकि, गंभीर धोखाधड़ी जांच कार्यालय (उपरोक्त) में एक अन्य मुद्दा जो इस न्यायालय के विचार के लिए आया था, वह यह था कि क्या

सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (ऊपर) ने संजय दत्त (ऊपर), मोहम्मद इकबाल मदार शेख और अन्य बनाम के मामले में अलग दृष्टिकोण अपनाया था। महाराष्ट्र राज्य ने (1996) 1 एस. सी. सी. 722 और एम. रवींद्रन बनाम में रिपोर्ट किया। खुफिया अधिकारी, राजस्व निदेशालय

खुफिया जानकारी (2021) 2 एस. सी. सी. 485 में दी गई है। इस न्यायालय ने विस्तार से बताया कि सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (ऊपर) में संजय दत्त (ऊपर), इकबाल मदार (ऊपर) और एम. रवींद्रन (ऊपर) के विपरीत कुछ भी निर्णय क्यों नहीं लिया गया था। हम प्रासंगिक टिप्पणियों को उद्धृत करते हैं:

" 12. जिस बिंदु पर विचार करने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या यह

अदालत ने संजय के मामले में अलग दृष्टिकोण अपनाया है।

दत्त (ऊपर), मदार शेख (ऊपर) और एम. रवींद्रन (ऊपर)। संजय दत्त (ऊपर) में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि

अभियुक्त को प्राप्त होने वाला अक्षम्य अधिकार चालान दाखिल करने से पहले ही लागू किया जा सकता है और चालान दायर किए जाने पर यह जीवित नहीं रहता है या लागू किया जा सकता है। यह स्पष्ट किया गया कि एक बार चालान दाखिल होने के बाद, जमानत देने के प्रश्न पर विचार किया जाना चाहिए और चालान दाखिल करने के बाद किसी आरोपी को जमानत देने से संबंधित प्रावधानों के तहत मामले के गुण-दोष के संदर्भ में ही निर्णय लिया जाना चाहिए। उपरोक्त निष्कर्षों के आलोक में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चालान दायर किए जाने के बाद अभियुक्त की अभिरक्षा द्वारा नियंत्रित नहीं है

धारा 167 (2) लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता के विभिन्न प्रावधान।

13. मदार शेख (सुप्रा) में, जिस पर निर्भर था

उत्तरदाता सं. की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील। 1 और 2 और मध्यस्थ, उसमें अपीलकर्ताओं को 16.01.1993 पर हिरासत में ले लिया गया। आरोप-पत्र 30.08.1993 पर प्रस्तुत किया गया था। हालांकि अपीलकर्ता आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1987 की धारा 20 (4) (बी) के तहत निर्धारित वैधानिक अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर नहीं किए जाने के कारण जारी किए जाने के हकदार थे, जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधान (ए) के साथ पढ़ा जाता है, लेकिन उन्होंने न्यायाधीश सिंह @जैस्वीर सिंह समरा @JASBIR राष्ट्रीय जांच एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.] के लिए आवेदन नहीं किया।

पूरा करने में चूक के आधार पर जमानत पर रिहाई के लिए

वैधानिक अवधि के भीतर जाँच। आरोप पत्र दाखिल करने और संज्ञान लेने के बाद, वे दंड प्रक्रिया संहिता के अन्य प्रावधानों के तहत पारित रिमांड के आदेशों के आधार पर हिरासत में बने रहे। उक्त तथ्य स्थिति में वैधानिक जमानत से राहत देने से इनकार करते हुए, इस न्यायालय ने कहा कि धारा 167 (2) के तहत किसी आरोपी को दिए गए अधिकार का उपयोग आरोप पत्र प्रस्तुत करने और संज्ञान लेने के बाद नहीं किया जा सकता है। मदार शेख (ऊपर) में फैसले को पढ़ने से पता चलता है कि

संज्ञान लिए जाने के बाद वैधानिक जमानत के अधिकार के अप्रवर्तनीय होने का संदर्भ उक्त मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए है, जहां इस न्यायालय ने अपीलार्थियों को इस आधार पर वैधानिक जमानत देने से इनकार कर दिया था कि आरोप पत्र दायर किया गया था और संज्ञान भी लिया गया था, साथ ही दंड प्रक्रिया संहिता के अन्य प्रावधानों के तहत रिमांड के आदेश पारित किए गए थे। इसके बाद, वे धारा 167 (2) के तहत जमानत के हकदार नहीं थे।

14. धारा 167 (2), सी. आर. पी. सी. के तहत जमानत के लिए आवेदन एम. रवींद्रन (ऊपर) में इस न्यायालय के विचार के लिए गिर गया। उक्त मामले में, अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया गया और 04.08.2018 पर न्यायिक हिरासत में भेज दिया गया।

नार्कोटिक्स ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 आई. डी. 1 पर, उसमें अपीलार्थी ने इस आधार पर धारा 167 (2) के तहत जमानत के लिए आवेदन दायर किया कि जाँच

पूर्ण नहीं था और वैधानिक अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर नहीं किया गया था। निचली अदालत ने धारा के तहत जमानत दे दी

167 (2) , जिसे मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 21.11.2019 के निर्णय द्वारा अलग कर दिया गया था। उक्त फैसले को चुनौती देना उच्च न्यायालय में, अपीलार्थी ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। उक्त मामले में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि उसमें अपीलार्थी ने निचली अदालत के समक्ष सुबह 10.30 पर एक आवेदन दायर किया और उसी दिन शाम 4:25 बजे अपीलार्थी के खिलाफ एक अतिरिक्त शिकायत दायर की गई, जिसके आधार पर जमानत आवेदन को खारिज करने की मांग की गई थी। इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले को दरकिनार करते हुए निचली अदालत के आदेश को बहाल कर दिया, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अभियुक्त ने अपने अधिकार का "लाभ उठाया" या उसे लागू किया है।

डिफॉल्ट जमानत पर रिहा किया गया, एक बार निर्धारित समय [2023] 6 एस. सी. आर. की समाप्ति पर धारा 167 (2) के तहत जमानत के लिए आवेदन दायर किया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अवधि। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि 180 दिनों की समाप्ति से पहले, कोई आरोप पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था और न ही जांच के लिए समय बढ़ाने के लिए कोई आवेदन दायर किया गया था, इस न्यायालय ने माना कि अपीलार्थी बाद में एक अतिरिक्त शिकायत दर्ज करने के बावजूद वैधानिक जमानत पर रिहा होने का हकदार था। उक्त मामले में जो बिंदु तय किया गया था वह यह था कि अभियुक्त द्वारा डिफॉल्ट जमानत पर रिहा होने के अपने अधिकार का लाभ उठाने के बाद एक अतिरिक्त शिकायत दर्ज करना, अदालतों को इस अक्षम्य अधिकार को लागू करने से नहीं रोकना चाहिए, यदि आरोप पत्र वैधानिक अवधि की समाप्ति से पहले दायर नहीं किया गया था। इस न्यायालय द्वारा संदर्भ दिया गया था

एम. रवींद्रन (ऊपर) में मदार शेख (ऊपर) को। इस अदालत ने कहा कि मदार शेख (ऊपर) में जमानत के लिए कोई पूर्व आवेदन दायर नहीं किया गया था, हालांकि आरोप पत्र वैधानिक अवधि की समाप्ति के बाद प्रस्तुत किया गया था। इस न्यायालय ने मदार शेख (उपरोक्त) में दर्ज निष्कर्षों को दोहराया कि आरोप पत्र प्रस्तुत किए जाने और संज्ञान लिए जाने के बाद जमानत के अधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, मदार शेख (ऊपर) में उक्त निष्कर्ष मामले के तथ्यों के संदर्भ में आया था।

15. आपराधिक अपील सं. में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए उठा मुद्दा। 701-702 2020 की धारा इस बात से संबंधित है कि क्या रिमांड की तारीख को 60 दिनों या 90 दिनों की अवधि की गणना में शामिल किया जाना है, जैसा कि धारा 167 (2) के परंतुक (ए) के तहत विचार किया गया है, ताकि डिफॉल्ट जमानत के दावे पर विचार किया जा सके। उक्त बिंदु पर विचारों के विचलन पर ध्यान देते हुए, इस न्यायालय ने एक बड़ी पीठ द्वारा इस मुद्दे पर विचार करने की आवश्यकता महसूस की। बाद में 12.03.2021 दिनांकित आदेश पारित किया गया

एसएलपी (सी. आर. एल.) में नं. 2105-2106 2021 और एसएलपी (सी. आर. एल.) नं. 2111-2112 2021 का वर्ष उन सभी मामलों को आपराधिक अपील संख्या के साथ जोड़ने के लिए है। 701-702 2020 से। याचिकाकर्ताओं की ओर से प्रस्तुत किया गया और उसमें अभिलिखित किया गया

आदेश अंतिम दिन गवाहों और दस्तावेजों की सूची के बिना आरोप पत्र दाखिल करने से संबंधित है जो आरोप पत्र के उचित दाखिल करने के बराबर नहीं है। श्री रोहतगी ने एसएलपी का उल्लेख किया (सीआरएल.) 2021 का सं. 2111-2112 और प्रस्तुत किया कि उठाए गए बिंदुओं में से एक धारा 167, सी. आर. पी. सी. के तहत वैधानिक अवधि की समाप्ति से पहले संज्ञान लेने से संबंधित है।

यह स्पष्ट है कि एक बड़ी पीठ का संदर्भ इस मुद्दे से संबंधित है-जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह समरा @JASBIR राष्ट्रीय जांच एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

रिमांड की तारीख को हटाने या शामिल करने के लिए

धारा 167 के तहत निर्धारित अवधि की गणना। इसलिए, इस मामले को एक को संदर्भित करने की कोई आवश्यकता नहीं है

बड़ी बेंच।

16. संजय दत्त (ऊपर) में निर्णयों की बारीकी से जांच,

मदार शेख (ऊपर) और एम. रवींद्रन (ऊपर) दिखाएंगे।

कि जो तय किया गया है उसके विपरीत कुछ भी नहीं है

भीकमचंद जैन (ऊपर) में। उपरोक्त सभी निर्णयों में जिन पर दोनों पक्षों द्वारा भरोसा किया जाता है, इस न्यायालय ने

स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है कि एक का अक्षम्य अधिकार

आरोपी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक जमानत मांगेगा यह केवल तभी उत्पन्न होता है जब आरोप पत्र के समक्ष दाखिल नहीं किया गया हो।

वैधानिक अवधि की समाप्ति। संज्ञान का संदर्भ

मदार शेख (ऊपर) में इस तथ्य की स्थिति को ध्यान में रखते हुए जहाँ

आरोप पत्र जमा करने के बाद आवेदन दाखिल किया गया था

और निचली अदालत द्वारा संज्ञान लिया गया था। इस तरह

संज्ञान लेने की अतिरिक्त आवश्यकता धारा के परंतुक (क) के तहत निर्धारित अवधि के भीतर

167 (2) , सी. आर. पी. सी., जिसमें विफल रहने पर अभियुक्त इसके हकदार होंगे।

डिफॉल्ट जमानत, आरोप पत्र दाखिल करने के बाद भी

वैधानिक अवधि। यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि

दोनों मदार शेख (ऊपर) और एम. रवींद्रन (ऊपर), यह

न्यायालय ने अपना विचार व्यक्त किया कि आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया

वैधानिक अवधि के भीतर लाभ उठाने का आधार है

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत जमानत का दावा करने का अक्षम्य अधिकार।

अभियुक्त की अभिरक्षा से संबंधित पहली
विचार किया गया है।

इस न्यायालय द्वारा 60 दिनों की समाप्ति पर भी

संबंधित न्यायालय द्वारा लिया जाता है। के रूप में समस्या उत्पन्न होती है
पूरी तरह से निर्णय द्वारा कवर किया गया है

इस मामले में विचार

भीकमचंद जैन (ऊपर) में, उच्च द्वारा पारित आदेश

31.05.2019 पर अदालत को इसके द्वारा दरकिनार कर दिया जाता है। "

(जोर दिया गया)

60. उपस्थित विद्वान वकील ने हमारा ध्यान आकर्षित किया

उन्होंने रितु छाबरिया बनाम के मामले में इस न्यायालय के एक बहुत ही हाल के फैसले पर आरोप लगाया।
भारत संघ और अन्य, लिखित याचिका [2023] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

2023 का संख्या 60 26.04.2023 पर तय किया गया। यह निर्णय इस दलील को मजबूत करने के लिए किया गया है कि अपूर्ण आरोप पत्र दाखिल करके अभियुक्त के जमानत मांगने के अधिकार को पराजित नहीं किया जा सकता है। रिटु बारिया ने संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट याचिका दायर की, जिसमें अपने पति को डिफॉल्ट जमानत पर रखने की मांग की गई। उक्त मामले के तथ्यों में,

ये मुद्दे इस न्यायालय के विचार के लिए पड़े:

आई. क्या पहले मामले की जांच पूरी किए बिना आरोप पत्र या अभियोजन शिकायत दुकड़ों में दायर की जा सकती है?

ii. क्या इस तरह के आरोप पत्र को पूरा किए बिना दाखिल करना

जाँच एक अभियुक्त के डिफॉल्ट जमानत देने के अधिकार को समाप्त कर देगी? iii. क्या किसी अभियुक्त की रिमांड निचली अदालत द्वारा जांच के लंबित रहने के दौरान सीआरपीसी द्वारा निर्धारित समय से आगे जारी रखी जा सकती है?

61. इस न्यायालय ने याचिका को स्वीकार करते हुए पैरा 24 में टिप्पणी की

5 क्रमशः, निम्नानुसार:

" 24. हालाँकि, वैधानिक जमानत का यह अधिकार समाप्त हो जाता है, यदि आरोप पत्र निर्धारित अवधि के भीतर दायर किया जाता है। Cr.PC की धारा 173 (8) के तहत पूरक आरोप पत्र का सहारा लेने का सवाल मुख्य आरोप पत्र दायर होने के बाद ही उठता है, और इस तरह, एक पूरक आरोप पत्र, जिसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जांच अभी भी जारी है।

लंबित, किसी भी परिस्थिति में, डिफॉल्ट जमानत के अधिकार को बाधित करने के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है, तब के लिए, डिफॉल्ट के पूरे उद्देश्य

जमानत खारिज हो जाती है, और आरोप पत्र दायर किया जाता है या पूरक आरोप पत्र मात्र एक औपचारिकता बन जाता है, और

उपकरण, यह पता लगाने के लिए कि डिफॉल्ट जमानत का अधिकार बाधित है। 25. इस प्रकार यह स्वयंसिद्ध है कि पहली जांच होनी चाहिए

पूरा किया गया, और तभी निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र या शिकायत दायर की जा सकती है, और ऐसा करने में विफलता धारा 167 (2) के तहत डिफॉल्ट जमानत के वैधानिक अधिकार को ट्रिगर करेगी।

का Cr.PC. भारत संघ बनाम तमिलरासी के मामले में &

ओआरएस। [(1995) 4 एस. सी. सी. 190], जो नार्कोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 के तहत एक मामला था

पता चला कि जाँच पूरी नहीं हुई थी और ए

आरोप पत्र निर्धारित अवधि के भीतर दायर नहीं किया गया था, डिफ़ॉल्ट जमानत से इनकार को जजबीर सिंह @जैसबिर सिंह समरा @जैसबिर के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन माना गया था।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

भारत का संविधान, और आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि यहाँ तक कि

जमानत देने पर दोहरी सीमा लागू नहीं होगी।

62. इस प्रकार, रितु छाबरिया (ऊपर) में, तथ्य पूरी तरह से अलग थे। उक्त मामले में, निर्विवाद रूप से, जाँच जारी थी,

और आरोप पत्र प्रस्तुत किया जाता है। हमारा विचार है कि इस न्यायालय का उपरोक्त निर्णय वर्तमान मामले में अभियुक्त के लिए कोई लाभप्रद नहीं है। मामले में वहीँ, पूरी जाँच पूरी होने के बाद आरोप पत्र दायर किया गया था। यह तथ्य विवादित नहीं है।

63. इस प्रकार, हम मुद्दा संख्या 1 का जवाब देते हैं कि आरोप पत्र दाखिल करना दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन है। और यह कि कोई अभियुक्त दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने के किसी भी अक्षम्य अधिकार का दावा इस आधार पर नहीं कर सकता है कि वैधानिक अवधि समाप्त होने से पहले संज्ञान नहीं लिया गया है।

आरोप पत्र दाखिल करने के लिए समय अवधि। हम एक बार फिर, सुरेश कुमार भीकमचंद जैन (उपरोक्त) में इस न्यायालय द्वारा कही गई बात को दोहराते हैं कि

सी. आर. पी. सी. की धारा 167 के तहत मंजूरी पर विचार नहीं किया गया है।

मुद्दा संख्या 2

64. अब हम अपीलार्थियों की ओर से प्रचार किए गए प्रस्तुतिकरण के दूसरे अंग पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ते हैं जिसमें आरोप पत्र दाखिल किया गया है।

एस. डी. जे. एम., अजनाला की अदालत ने एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 के तहत अधिसूचित विशेष अदालत के बजाय और उसके बाद मजिस्ट्रेट ने सी. आर. पी. सी. की धारा 209 के प्रावधानों के तहत मामले को सत्र अदालत को सौंपते हुए मजिस्ट्रेट के अदालत में आरोप पत्र दायर करने की तारीख से अपीलार्थियों की हिरासत या आगे की हिरासत को पूरी तरह से गैरकानूनी बताते हुए आगे की सभी कार्यवाही को दूषित कर दिया। दूसरे शब्दों में कहें तो, हमें इस दलील पर विचार करने की आवश्यकता है कि चूंकि मजिस्ट्रेट के न्यायालय में आरोप पत्र हमारे समक्ष दो अपीलार्थियों की गिरफ्तारी के 161 वें दिन दायर किया गया था, उसके बाद अपीलार्थियों की आगे की हिरासत को गैरकानूनी कहा जा सकता है और अपीलार्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधानों के तहत वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा होने के हकदार थे।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

65. यू. ए. पी. ए. की धारा 2 (1) (डी) इस प्रकार है:

" 2 (1) (डी)। न्यायालय का अर्थ है इस अधिनियम के तहत अपराधों का मुकदमा चलाने के लिए संहिता के तहत अधिकार क्षेत्र रखने वाला आपराधिक न्यायालय और इसमें धारा 11 के तहत या धारा के तहत गठित एक विशेष न्यायालय शामिल है।

22 राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण अधिनियम, 2008; "

66. ऊपर निर्दिष्ट "न्यायालय" की परिभाषा का सरल अध्ययन इंगित करता है कि इसमें धारा 11 के तहत गठित विशेष न्यायालय शामिल है।

या एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 11 केंद्र सरकार को सत्र न्यायालय को विशेष न्यायालय के रूप में नामित करने की शक्ति प्रदान करती है। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 राज्य सरकार को सत्र न्यायालय को विशेष न्यायालय के रूप में नामित करने की शक्ति प्रदान करती है।

67. एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 6 का अवलोकन अनुसूचित अपराधों की जांच के बारे में बताता है। के अधीन अनुसूचित अपराध

यू. ए. पी. ए. को एन. आई. ए. अधिनियम की अनुसूची में क्रम संख्या 2 में शामिल किया गया है। इसके बाद, एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 10 अनुसूचित अपराधों की जांच करने के लिए राज्य सरकार की शक्ति के बारे में निर्धारित करती है। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 11 विशेष न्यायालय के गठन के लिए केंद्र सरकार की शक्ति के बारे में निर्धारित करती है, जबकि एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 राज्य सरकार की शक्तियों को निर्धारित करता है। अनुसूचित अपराध के मुकदमे के लिए विशेष न्यायालय का गठन करने के लिए। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 13 में विशेष न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का विवरण है। दोनों अधिनियमों के इन प्रावधानों को एक साथ पढ़ने से इस विधायी आदेश का पता चलता है कि यू. ए. पी. ए. अधिनियम के तहत अपराध एन. आई. ए. अधिनियम की अनुसूची में शामिल किए गए अनुसूचित अपराधों के अंतर्गत आते हैं। हालांकि, एन. आई. ए. अधिनियम की योजना वैधानिक प्रावधानों का सावधानीपूर्वक पालन करने के बाद एन. आई. ए. या संबंधित राज्य सरकार द्वारा इसकी जांच करने की प्रक्रिया निर्धारित करती है। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 10 आगे स्पष्ट करती है कि राज्य सरकार के पास निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार अनुसूचित अपराध की जांच करने की शक्ति भी है।

यह अधिनियम। हालांकि, विधायी जनादेश में कोई अस्पष्टता नहीं है कि दोनों स्थितियों में, चाहे जांच एन. आई. ए. द्वारा की जाए या राज्य सरकार द्वारा, अनुसूचित अपराध का मुकदमा केवल इस अधिनियम के तहत गठित विशेष न्यायालय द्वारा किया जाएगा। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 13 को इस अधिनियम की धारा 11 के साथ पढ़ा जाना है जब एन. आई. ए. द्वारा जांच की जाती है और ऐसी स्थिति में, जांच राज्य सरकार को सौंपी गई है, तो धारा 13 को एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 22 के साथ पढ़ा जाना है। दोनों खंडों को एक साथ पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस स्थिति में जांच हो रही है, उसमें जजबीर सिंह @जैसबीर सिंह सामरा @जैसबीर हैं।

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

राज्य सरकार द्वारा उस स्थिति में एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 13 की उप-धारा (1) में एजेंसी के संदर्भ को धारा 22 (2) (ii) के अनुसार एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 13 की उप-धारा (1) में एजेंसी के संदर्भ के रूप में माना जाएगा।

राज्य सरकार "। 68. इस प्रकार, दोनों अधिनियमों की योजना यह स्पष्ट करती है कि एक बार जांच पूरी हो जाने के बाद, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत रिपोर्ट अधिनियम के तहत गठित विशेष अदालत में दायर की जानी है। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 किसी भी संदेह के लिए कोई जगह नहीं छोड़ती है, क्योंकि यह विशेष को सशक्त बनाती है।

अदालत अभियुक्त के बिना किसी भी अपराध का संज्ञान लेगी

इस तरह के अपराध का गठन करने वाले तथ्यों की शिकायत प्राप्त करने पर या ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर, परीक्षण के लिए इसके लिए प्रतिबद्ध। इस प्रकार, एन. आई. ए. अधिनियम में धारा 16 को शामिल करके विधायिका ने विशेष न्यायालय को सत्र न्यायालय के विपरीत मूल अधिकार क्षेत्र का न्यायालय बना दिया है, जो आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत एक न्यायिक न्यायालय है। (सतीश को देखें।

कुमार बनाम। पंजाब राज्य और दूसरा, 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. एंड एच. 786) 69. सतीश कुमार (उपरोक्त) मामले में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने चंडीगढ़ द्वारा जारी एक अधिसूचना का उल्लेख किया है।

पंजाब सरकार दिनांक 10.6.2014 जिसमें राज्य सरकार द्वारा एन. आई. ए. अधिनियम से जुड़ी अनुसूची में निर्दिष्ट अपराध के मुकदमे के लिए विशेष अदालतों का गठन किया जाता है, जिनकी जांच राज्य पुलिस द्वारा की जाती है। उपरोक्त अधिसूचना निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत की गई है:

“ अधिसूचना 10 जून, 2014 सं. S.O.141/C.A.34/2008/S. 22/2014-के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए

राष्ट्रीय जांच एजेंसी अधिनियम, 2008 (2008 का केंद्रीय अधिनियम संख्या 34) की धारा 22 की उप धारा (1) और इस संबंध में उन्हें सक्षम बनाने वाली अन्य सभी शक्तियां, पंजाब के राज्यपाल

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश की सहमति से, चंडीगढ़ ने राज्य के प्रत्येक जिला मुख्यालय में सत्र न्यायाधीश और पहले अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश (उनके संबंधित अधिकार क्षेत्र में आने वाले क्षेत्र के लिए) की अदालतों का गठन किया है, जो उपरोक्त अधिनियम में संलग्न अनुसूचित अपराधों के मुकदमे के लिए विशेष अदालतें होंगी, जो निम्नलिखित हैं -

राज्य पुलिस द्वारा जाँच की गई "।

70. अपीलार्थियों की ओर से पेश विद्वान वकील ने विक्रमजीत सिंह (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय के फैसले पर पूरा भरोसा जताया, जिसमें इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यू. ए. पी. ए. के अधीन सभी अपराध, चाहे वे एन. आई. ए. द्वारा या राज्य सरकार की जाँच एजेंसी द्वारा जाँच किए गए हों, [2023] 6 एस. सी. आर. हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

उस अधिनियम के तहत स्थापित विशेष न्यायालय द्वारा विशेष रूप से मुकदमा चलाया जाता है और केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा जारी अधिसूचनाओं द्वारा स्थापित किसी भी विशेष न्यायालय की सहायता से, फिर अकेले न्यायालय। इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

“ 26. एन. आई. ए. अधिनियम लागू होने से पहले, यू. ए. पी. ए. के तहत अपराध

वे दो प्रकार के थे-जिनके लिए अधिकतम कारावास

7 वर्ष से अधिक और अधिकतम 7 वर्ष के कारावास वाले लोग।

वर्षों और उससे कम। अपराधों पर लागू होने वाली संहिता के तहत

अन्य कानूनों के विरुद्ध, अधिकतम 7 की सजा वाले अपराध

मजिस्ट्रेट की अदालतों द्वारा वर्षों और उससे कम की सुनवाई की जा सकती है,

जबकि 7 वर्ष से अधिक की अधिकतम सजा वाले अपराध सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य हैं। यह योजना है

एन. आई. ए. अधिनियम, 2008 द्वारा पूरी तरह से समाप्त कर दिया गया सभी अनुसूचित अपराधों यानी यू. ए. पी. ए. के तहत सभी अपराधों के रूप में,

क्या राष्ट्रीय जाँच एजेंसी द्वारा जाँच की गई है

या राज्य सरकार की जांच एजेंसियों द्वारा, हैं विशेष रूप से इसके तहत स्थापित विशेष न्यायालयों द्वारा मुकदमा चलाया जाएगा

एकट करें। अधिसूचना द्वारा किसी नामित न्यायालय की अनुपस्थिति में

केंद्र सरकार या राज्य द्वारा जारी किया गया

सरकार, इसका खामियाजा अकेले सत्र न्यायालय पर है। इस प्रकार, उपरोक्त योजना के तहत जो स्पष्ट हो जाता है वह यह है कि

जहाँ तक यू. ए. पी. ए. के तहत सभी अपराधों का संबंध है,

पहले परंतु के तहत समय बढ़ाने के लिए मजिस्ट्रेट का अधिकार क्षेत्र

धारा 43-डी (2) (बी) में "न्यायालय" का अस्तित्व नहीं है।

एक सत्र न्यायालय, निर्दिष्ट करने वाली अधिसूचना के अभाव में एक विशेष न्यायालय, या स्वयं विशेष न्यायालय। द इम्पाग्ड

विपरीत निष्कर्ष पर पहुँचने का निर्णय गलत है

क्योंकि यह एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 13 के साथ पठित धारा 22 (2) से चूक गया है। इसके अलावा, विवादित निर्णय धारा 16 (1) से चूक गया है।

मुकदमे के लिए प्रतिबद्ध, अन्य बातों के साथ-साथ, एक पुलिस रिपोर्ट पर ऐसे तथ्य।

27. XXX

XXX

XXX

" धारा 167 (2) परंतुक (ए) के तहत जमानत का अधिकार

निरपेक्ष है। यह एक विधायी आदेश है न कि अदालत का। विवेकपूर्ण। यदि जाँच एजेंसी आरोप पत्र दाखिल करने में विफल रहती है

90/60 दिनों की समाप्ति से पहले, जैसा भी मामला हो, न्यायाधीश सिंह @जैसबिर सिंह सामरा @जैसबिर

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

हिरासत में रखे गए अभियुक्त को जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए। लेकिन उस स्तर पर, मामले के गुण-दोष की जांच नहीं की जानी चाहिए। बिलकुल नहीं। वास्तव में, मजिस्ट्रेट के पास किसी व्यक्ति को 90/60 दिनों की निर्धारित अवधि से आगे रिमांड करने की कोई शक्ति नहीं है। उसे जमानत का आदेश पारित करना चाहिए और आवश्यक जमानत बांड प्रस्तुत करने के लिए आरोपी को सूचित करना चाहिए। "

71. विद्वान ए. एस. जी. के अंत में उपरोक्त का जवाब यह है कि चूंकि राज्य पुलिस द्वारा जांच की जा रही थी, इसलिए उसने एस. डी. जे. एम., अजनाला के समक्ष 15.11.2019 पर पहली रिपोर्ट दायर करने के लिए आगे बढ़ा, जहां अपीलार्थियों को उनकी गिरफ्तारी के बाद पहली बार पेश किया गया था। विद्वान एएसजी के अनुसार इसका सीआरपीसी की धारा 167 से कोई लेना-देना नहीं है। विद्वान ए. एस. जी. ने आगे बताया कि अंततः मामला सत्र न्यायालय को सौंप दिया गया और अंत में एन. आई. ए./यू. ए. पी. ए. के लिए गठित विशेष न्यायालय को हस्तांतरित कर दिया गया। विद्वान ए. एस. जी. के अनुसार, यह विवाद में नहीं है कि सक्षम अधिकारियों द्वारा दिए गए प्रतिबंधों को देखने के बाद विशेष अदालत ने अंततः संज्ञान लिया था।

72. हम इस बात से सहमत हैं कि आरोप पत्र एस. डी. जे. एम. की अदालत में दायर नहीं किया जा सकता था और इसे एस. डी. जे. एम. की अदालत में दायर किया जाना चाहिए था।

विशेष न्यायालय। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 विशेष न्यायालय को किसी भी अपराध का संज्ञान लेने का अधिकार देती है, जिसमें अभियुक्त को मुकदमे के लिए प्रतिबद्ध नहीं किया जाता है, ऐसे तथ्यों की शिकायत प्राप्त होने पर जो इस तरह के अपराध का गठन करते हैं या ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर। हालांकि, विचार करने के लिए मूल प्रश्न यह है कि क्या अनावश्यक प्रतिबद्ध कार्यवाही ने स्वयं ही आगे की सभी कार्यवाही को दूषित कर दिया और इस तरह अपीलकर्ताओं के पक्ष में वैधानिक/चूक की मांग करने का एक अक्षम्य अधिकार पैदा कर दिया।

सी. आर. पी. सी. की धारा 167 के तहत जमानत? हमारा विचार है कि एस. डी. जे. एम. की अदालत में आरोप पत्र दायर करने और उसके बाद मामले को सत्र न्यायालय को सौंपने में जांच एजेंसी की ओर से हुई त्रुटि का फिर से सी. आर. पी. सी. की धारा 167 से कोई लेना-देना नहीं है। अपीलार्थियों की ओर से इस पूरे तर्क को पूरी तरह से इस आधार पर रखा जा सकता है कि यू. ए. पी. ए. की धारा 43 डी के साथ पठित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत डिफॉल्ट जमानत की मांग करने वाला आवेदन विशेष न्यायाधीश, एन. आई. ए., मोहाली के समक्ष <आई. डी. 1 पर दायर किया गया था और उस समय तक आरोप पत्र पहले ही दायर किया जा चुका था और कार्यवाही विशेष न्यायाधीश, सी. बी. आई., पंजाब, एस. ए. एस. नगर, मोहाली की अदालत में लंबित थी। यह विवाद में नहीं है कि उस समय जब विशेष न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लिया था, यू. ए. पी. ए. और 1908 अधिनियम के तहत प्रतिबंध पहले ही दिए जा चुके थे।

23] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

73. इस प्रकार, हम मुद्दा संख्या 2 का उत्तर देते हैं जिसमें कहा गया है कि जांच एजेंसी की ओर से न्यायालय के समक्ष पहले आरोप पत्र दायर करने में त्रुटि हुई है।

मजिस्ट्रेट का सीआरपीसी की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफ़ॉल्ट जमानत लेने के आरोपी के अधिकार से कोई लेना-देना नहीं है। जब एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 के आधार पर एन. आई. ए. द्वारा यू. ए. पी. ए. के तहत अभियोजन की बात आती है तो प्रतिबद्ध कार्यवाही की आवश्यकता नहीं होती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि विशेष न्यायालय मूल क्षेत्राधिकारों में से एक के रूप में कार्य करता है। एन. आई. ए. अधिनियम की धारा 16 के आधार पर, न्यायालय को सी. आर. पी. सी. की धारा 193 की आवश्यकताओं का पालन करने की आवश्यकता नहीं है। 74. हमने संबंधित अपीलार्थियों के समर्थन में उपस्थित विद्वान वकील द्वारा भरोसा किए गए मामले के कानून पर भी ध्यान दिया है

उनकी प्रस्तुतियाँ। तथापि, हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम निर्भर किए गए प्रत्येक निर्णय पर चर्चा करें क्योंकि कोई भी निर्णय अपीलार्थी के लिए उपयोगी नहीं है। प्रत्येक निर्णय विशिष्ट तथ्यों में होता है

मामला।

75. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, दोनों अपीलें खारिज होने योग्य हैं। लेकिन इससे पहले कि हम अंतिम आदेश पारित करने के लिए आगे बढ़ें,

इस मुकदमे में एक धब्बा है जिस पर हमें गौर करना चाहिए और उस संबंध में कुछ कहना चाहिए। बेशक, इस अस्पष्ट क्षेत्र में अपीलार्थियों की ओर से पेश विद्वान वकील द्वारा प्रवेश नहीं किया गया है, लेकिन देश के सर्वोच्च न्यायालय के रूप में, हमें इस पर अपनी आंखें बंद नहीं करनी चाहिए।

एन. आई. ए./राज्य के लिए कोई भी आँख खुली सूची

पुलिस 76. जैसा कि हमारे फैसले के पहले भाग में संदर्भित तिथियों और घटनाओं के कालक्रम से स्पष्ट है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के तहत अंतिम रिपोर्ट एस. डी. जे. एम., अजनाला की अदालत में 15.11.2019 पर दायर की गई थी।

15.11.2019 यह हमारे समक्ष दो अपीलार्थियों, यथा, जसबिर सिंह और वरिंदर सिंह की गिरफ्तारी की तारीख से 161 वां दिन था। उन्हें सबसे पहले 08.06.2019 पर गिरफ्तार किया गया था। पंजाब पुलिस ने धारा के प्रावधान को लागू करते हुए जांच पूरी करने के लिए समय बढ़ाने के लिए अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर की अदालत में आवेदन किया। 4304.09.2019 पर यू. ए. पी. ए. का डी. (2) (बी)। जब समय बढ़ाने के लिए यह आवेदन दायर किया गया था, तो 90 दिनों की अवधि समाप्त होने के लिए केवल दो दिन बचे थे। यह इस तथ्य का संकेत है कि 91 वां दिन 07.09.2019 पर पड़ा होगा। इस बात पर प्रकाश डालना महत्वपूर्ण है कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर ने पंजाब पुलिस द्वारा दायर 'आईडी2' दिनांकित विस्तार आवेदन पर गौर किया और अंततः अपने 'आईडी1' दिनांकित आदेश के अनुसार समय सीमा को 101 वें दिन बढ़ा दिया।

उस समय तक, अतिरिक्त न्यायाधीश सिंह @जैस्विर सिंह सामरा @जैस्विर

वी. राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण [जे. बी. पारदीवाला, जे.]

सत्र न्यायाधीश, अमृतसर ने समय बढ़ाने का आदेश पारित किया, 90 दिनों की अवधि पहले ही समाप्त हो चुकी थी। निर्विवाद रूप से, 91 वें दिन यानी 07.09.2019 पर अदालत के समक्ष कोई आरोप पत्र नहीं था। हम क्यों कहते हैं कि यह एक धूसर क्षेत्र है क्योंकि क्या होता अगर अपीलकर्ता जसबिर सिंह और वरिंदर सिंह ने एक आवेदन को प्राथमिकता दी होती

सी. आर. पी. सी. की धारा 167 (2) के तहत वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत की मांग करना

प्रवीणचंद्र आदित्य बनाम। गुजरात राज्य ने 2022 में एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1290 में बताया कि जांच पूरी करने के लिए 180 दिनों तक का समय बढ़ाने से पहले अभियुक्त व्यक्तियों को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए। अपीलकर्ताओं, जसबिर और वरिंदर सिंह की ओर से एकमात्र त्रुटि या चूक यह थी कि वे एक उपयुक्त निर्णय लेने में विफल रहे।

91 वें दिन वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत की मांग करने वाला आवेदन। यदि ऐसा आवेदन दायर किया गया होता, तो अदालत के पास उन्हें वैधानिक/डिफॉल्ट जमानत पर रिहा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। न्यायालय यह नहीं कह सकता था कि चूंकि विस्तार आवेदन लंबित था, इसलिए वह विस्तार आवेदन पर निर्णय लेने के बाद ही एक उचित आदेश पारित करेगा। यह फिर से कानून की अच्छी तरह से स्थापित स्थिति के विपरीत कुछ होता। यह मुकदमा एन. आई. ए. के साथ-साथ राज्य की जांच एजेंसी के लिए एक आंख खोलने वाला है कि यदि वे विस्तार की मांग करना चाहते हैं, तो उन्हें सावधान रहना चाहिए कि इस तरह के विस्तार के लिए अंतिम समय में अनुरोध नहीं किया जाता है।

77. यदि अभियुक्त ने इस तरह की जमानत के लिए आवेदन किया है, तो भी डिफॉल्ट जमानत पर रिहा होने का अधिकार प्रवर्तनीय बना हुआ है।

जमानत आवेदन की लंबितता या बाद में आरोप पत्र दायर करना या अदालत के समक्ष अभियोजन पक्ष द्वारा समय बढ़ाने की मांग करने वाली रिपोर्ट। हालांकि, जहां आरोपी डिफॉल्ट जमानत के लिए आवेदन करने में विफल रहता है जब उसे अधिकार प्राप्त होता है, और बाद में एक आरोप पत्र, या समय बढ़ाने की मांग करने वाली रिपोर्ट को मजिस्ट्रेट या किसी अन्य के समक्ष प्राथमिकता दी जाती है।

सक्षम न्यायालय, चूक जमानत का अधिकार समाप्त हो जाएगा। द.

अदालत मामले का संज्ञान लेने या जांच पूरी करने के लिए और समय देने के लिए स्वतंत्र होगी, जैसा भी मामला हो, हालांकि आरोपी को अभी भी दंड प्रक्रिया संहिता के अन्य प्रावधानों के तहत जमानत पर रिहा किया जा सकता है।

78. उपरोक्त पैरा 76 और 77 में हमारी टिप्पणियाँ इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों [2023] 6 एस. सी. आर. द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में रखते हुए हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

एच सैयद मोहम्मद के मामले में। अहमद काजमी बनाम। राज्य (दिल्ली का सरकारी सी. टी.) और अन्य ने (2012) 12 एस. सी. सी. 1 में रिपोर्ट किया, जिसमें क्रमशः 25, 26 और 27 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:

" 25. संबंधित पक्षों की ओर से की गई दलीलों, कानून के प्रासंगिक प्रावधानों और उद्धृत निर्णय पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, हम राज्य की ओर से विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री रावल द्वारा प्रस्तुत की गई दलीलों को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। कोई इनकार नहीं है

तथ्य यह है कि 17-7-2012 पर, जब 2012 की सी. आर. संख्या 86 को अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश और की अभिरक्षा द्वारा अनुमति दी गई थी अपीलार्थी को अवैध माना गया और अपीलार्थी की ओर से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत एक आवेदन किया गया।

वैधानिक जमानत देने के लिए जिसे सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया था।

आवेदन को सुनने के बजाय, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट ने इसे अगले दिन तक के लिए स्थगित कर दिया जब

लोक अभियोजक ने विस्तार के लिए आवेदन दायर किया

अभिरक्षा और जाँच की अवधि और 20-7-2012 पर

2-6-2012 से पूर्वव्यापी प्रभाव के साथ जांच का समय और अपीलार्थी की हिरासत 90 दिनों की और अवधि के लिए बढ़ा दी गई। मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट के आदेश की पूर्वव्यापीता न केवल असमर्थनीय है, बल्कि यह उस वैधानिक अधिकार को भी विफल नहीं कर सकता है जो अपीलार्थी को उस तारीख से 90 दिनों की समाप्ति पर प्राप्त हुआ था जब अपीलार्थी को हिरासत में लिया गया था। ऐसा अधिकार, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा संजय दत्त [(1994) 5 एस. सी. सी. 410 1994 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1433] और अन्य मामलों में टिप्पणी की गई है।

एक बार जब मामले में आरोप पत्र दायर कर दिया गया था और वैधानिक जमानत देने के लिए इससे पहले कोई आवेदन नहीं किया गया था, तो उसे खारिज कर दिया गया था। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि यदि कोई अभियुक्त वैधानिक अनुदान देने के अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करता है आरोप-पत्र दाखिल किए जाने से पहले जमानत, एक बार ऐसा आरोप-पत्र दायर किए जाने के बाद वह इस तरह के लाभ का अपना अधिकार खो देता है और उसके बाद,

केवल नियमित जमानत के लिए आवेदन करें।

26. हालाँकि, इस मामले में परिस्थितियाँ अलग हैं।

कि अपीलार्थी ने उसी दिन वैधानिक जमानत के अपने अधिकार का प्रयोग किया था जिस दिन उसकी अभिरक्षा को अवैध माना गया था

और इस तरह के आवेदन को मुख्य न्यायाधीश सिंह @जैस्विर सिंह समरा @जैस्विर राष्ट्रीय जांच एजेंसी [जे. बी. पारदीवाला, जे.] द्वारा अनिश्चित छोड़ दिया गया था।

मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा दायर आवेदन के बाद तक
जांच पूरी करने के लिए समय बढ़ाने के लिए अभियोजन पक्ष
इस पर विचार किया गया और आदेश पारित किए गए।

27. हम द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया की सराहना करने में असमर्थ हैं

मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, जिसका समर्थन किया गया है
उच्च न्यायालय द्वारा और हमारा विचार है कि अपीलार्थी

17-7-2012 पर वैधानिक जमानत देने का अधिकार प्राप्त किया,

जब उसकी हिरासत को अतिरिक्त द्वारा अवैध माना गया था

सत्र न्यायाधीश ने वैधानिक जमानत के लिए अपने आवेदन के बाद से

उस समय लंबित जब के विस्तार के लिए आवेदन

जांच जारी रखने के लिए समय दर्ज किया गया था

अभियोजन। हमारे विचार में, अपीलार्थी का अनुदान देने का अधिकार

वैधानिक जमानत के बाद के द्वारा अप्रभावित रहा

आवेदन और दोनों मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट और

उच्च न्यायालय ने अन्यथा ठहराने में गलती की।

(जोर दिया गया)

79. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, दोनों अपील विफल हो जाती हैं और
इरेबी बर्खास्त।

80. लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का निपटारा कर दिया जाएगा।

याचिकाएं

खारिज कर दी गई।

जैन

तमन्ना, एलसीआरए द्वारा संपादित)